विष्णु सहत्र नाम

श्री विष्णु सहस्त्रनाम

भाषा-टीका सहितम्

गोपालस्तवराज, गोपालकवच, राधास्तोत्र, लक्ष्मीअष्टक, लक्ष्मीस्तोत्र, कृष्णकीर्तन एवं अनेक आरतियों सहित

फोन : २७८०८७

प्रकाशक :

रतन एण्ड को०, बुकसेलर्स
१६ दरियागंज, नई दिल्ली-२

मूल्य : ४.०० रुपये
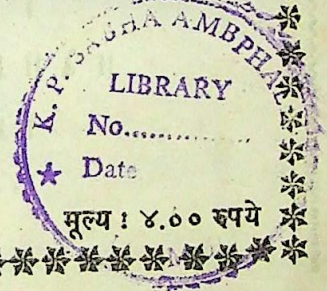
श्री गणेशाय नमः

॥ अथ ध्यानम् ॥

पीताम्बरधरं विष्णुं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥ २ ॥
व्यासं वशिष्ठनतारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् ।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधम् ॥ ३ ॥
व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।
नमो वै ब्रह्मनिधये वाशिष्ठाय नमोनमः ॥ ४ ॥
अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः ।
अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणिः ॥ ५ ॥
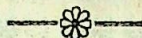
श्री गणेशाय नमः

श्री विष्णु सहस्त्रनाम भाषा टीका

अथ माहात्म्यम्

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात्। विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ १ ॥ नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते। अनेकरूप रूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ २ ॥

जिसके केवल स्मरण करने से ही जीव आवागमन और संसार के लोभ मोहादिक बंधन से छूटकर मोक्ष पाते हैं, उस सर्वव्यापक, सर्वशक्तिवान भगवान विष्णु को नमस्कार है ॥ १ ॥ जो सम्पूर्ण प्राणियों के आदिभूत हैं एवं अनेक रूपों में विद्यमान हैं, ऐसे सर्वव्यापक भगवान विष्णु के लिये नमस्कार है ॥ २ ॥

वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः। युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥ ३ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ किमेकं

दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् । स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥ ४ ॥

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! महाराज युधिष्ठिर मन, कर्म, वाणी से तीनों पापों को नाश करने वाले, सम्पूर्ण वेदोक्त को सब प्रकार से सुनकर भीष्म पितामह से फिर पूछने लगे ॥ ३॥ राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे महाराज ! संसार में एक सर्वेश्वर सर्वशक्तिमान् देवता कौन है ? और सबसे परे एक स्थान कौनसा है ? (जहां हृदय के समस्त दुर्विचार और संशय मिट जाते हैं) और किस देवता के गुण संकीर्तन करें तथा किस देवता की कायिक, वाचिक व मानसिक पूजा करने से मनुष्य कल्याण रूप स्वर्गादि फल को प्राप्त होवें ॥ ४ ॥

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः । किं जपन्मुच्यतेजन्तुर्जन्म-संसारबंधनात् ॥ ५ ॥ भीष्म उवाच ॥ जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् । स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥ ६ ॥ तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् । ध्यानम् स्तुवन्नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥ ७ ॥ अनादि निधनं विष्णुं सर्वलोक महेश्वरम् । लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो-भवेत् ॥ ८ ॥

हे महाराज ! सम्पूर्ण धर्मों में कौनसा धर्म आपको परम मन्तव्य है, जिसके जप करने से प्राणीमात्र जन्म मरण और अविद्यारूपी साँसारिक बन्धन से छूट परमगति पाते है ॥ ५ ॥ भीष्म पितामह बोले—निरन्तर प्रयत्नवान् पुरुष, स्थावर जंगम के स्वामी, देवों के देव, अनन्त पुरुषोत्तम भगवान् की सहस्रनाम से स्तुति करे और उन्हीं अविनाशी सर्वशक्तिमान की प्रतिदिन पूजा, ध्यान, स्तुति और नमस्कार करता रहे और यदि मध्यान्त रहित सर्बव्यापक लोकों के स्वामी भगवान विष्णु की नित्य स्तुति करे तो प्राणी कायिक, वाचिक, मानसिक पापों से छूटकर मोक्ष प्राप्त करता है ॥ ६, ७, ८॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् । लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥ ९ ॥ एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः । यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥ ११ ॥

कैसे हैं विष्णु भगवान, ब्रह्मा और ब्राह्मणों के हितकारक, सम्पूर्ण धर्मों के जानने वाले प्राणियों के यश और कीर्ति के बढ़ाने वाले, लोकों के स्वामी, परमार्थ, सत्य, सब चराचर के उत्पत्ति स्थान हैं ॥९॥ संपूर्ण वेद लक्षण धर्म में यही धर्म मुझे अधिकतम अभीष्ट है कि मनुष्य सदा गुण, संकीर्तन करके भक्तिपूर्वक पुण्डरीकाक्षकी स्तुति करता रहे क्योंकि, विष्णु पुराण में कहा भी है— "ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायाँ द्वापरेऽर्चयेत् । यदाप्नोति तदाप्नोति कलौसंकीर्त्य केशवम् ॥" जो

फल सतयुग में ध्यान से, त्रेता में यज्ञादिक से, द्वापर में पूजने से मिलता था, सो फल इस कलियुग में केवल नाम संकीर्तन से मिलता है ॥१०॥

परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः। परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥ ११ ॥ पवित्राणां पवित्रं यो मंगलानां च मंगलम्। दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिताः ॥ १२ ॥

जिसके तेज से सूर्य, चन्द्र, तारागण सब ज्योतिष्मान पदार्थ प्रकाशित हैं और परम सत्य स्वरूप हैं परब्रह्म हैं और पारायण अर्थात परमधाम हैं, जहां मोक्ष चाहने वाले जीवों को अनन्त सुख मिलता है ॥ ११ ॥ पवित्रों को भी पवित्र करने वाले, मंगल पदार्थों के मंगलदाता और ब्रह्मादिक देवता के भी पूज्य, उपास्य देवता और चराचर के नियन्ता, कर्ता, त्रिकाल के अविनाशी, विकार रहित, सब की रक्षा करने वाले परमात्मा हैं, केवल विष्णु के ध्यान, संकीर्तन में सम्पूर्ण तीर्थादि फल हैं ॥१२॥

यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे। यस्मिश्च प्रलयं यांति पुनरेवः युगक्षये ॥ १३ ॥ तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते। विष्णोर्नाम-सहस्त्रस्य मे श्रृणु पापभयापहम् ॥ १४ ॥

जिस परमात्मा से कल्प के आदि में सब चराचर स्थावर, जंगम उत्पन्न होते हैं उसी परमात्मा में महाप्रलय के समय सब लीन हो जाते हैं, जैसे पानी का बबूला पानी से बनकर पानी में समा जाता है ॥१३॥ उसी लोकों के आदि कारण, उत्पत्ति, सर्वव्यापक विष्णु जो अशुभ कर्मादि पापों को नाश करने वाले, उनके दिव्य सहस्रनाम को एकाग्रचित होकर मुझसे सुनो ॥१४॥

यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः। ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥ १५ ॥ ऋषिर्नाम्नां सहस्त्रस्य वेदव्यासो महामुनिः। छन्दोऽनुष्टुपतथादेवोभगवान्देवकीसुतः ॥ १६ ॥ विष्णुं विष्णु महाविष्णुं प्रभविष्णुं महेश्वरम्। अनेकरूपं दैत्यान्तं नमामि पुरुषोत्तमम् ॥ १७ ॥

मंत्र-दृष्टा ऋषियों ने जो प्रभु के नाम प्रभु के गुणों से गाये हैं, उनमें जो अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष के देने वाले प्रसिद्ध नाम हैं, सो मैं प्राणियों के हितार्थं कहता हूं ॥ १५ ॥ महर्षि वेदव्यासजी इस विष्णु सहस्रनाम के ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द हैं और भगवान देवकी पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रजी देवता हैं ॥१६॥ सर्वव्यापक, शत्रुओं के नाशकर्ता, महाविष्णु, सब के उत्पत्ति कारण, महेश्वर, अनेक रूप धारण कर दैत्यों के संहार कर्ता पुरुषोत्तम भगवान के लिये मेरा नमस्कार है ॥१७॥

ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्र महामन्त्रस्यश्रीभगवान-वेदव्यास ऋषिरनुष्टुप् छन्दः, श्रीकृष्णः परमात्मादेवता, आत्मयोनिः स्वयंजात इति बीजम्, देवकीनन्दनः स्त्रष्टेतिशक्तिः, उदभवः चोभणो देव इति परमो मन्त्रः, शंखभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्, श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे सहस्त्रनामस्तोत्रजपे-विनियोगः ॥

इस विष्णु के दिव्य सहस्रनाम के ऋषि वेदव्यास हैं, अनुष्टुप् छन्द (बत्तीस बत्तीस अक्षर के) श्रीकृष्ण परमात्मा देवता हैं, आत्म योनिः स्वयं जात, यह बीज है, देवकीनन्दन, स्त्रष्टा, यह शक्ति है, उद्भवः क्षोभणो देव, यह परम मंत्र है, शंखभृन्नन्दकीचक्री यह कीलक है, ऐसे दिव्य सहस्रनाम का मैं श्री विष्णु के प्रसन्न करने हेतु पाठ करता हूं।

अथ अंगन्यासः ॥ ॐ शिरसि श्रीवेदव्यासऋषये नमः । ॐ मुखे अनुष्टुपछन्दसे नमः । ॐ हृदिश्रीकृष्णपरमात्मदेवतायै नमः । ॐ सर्वांग शंखभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकाय नमः ॥

अथ करन्यासः ॥ ॐ उद्भवाय अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्षोभणाय तर्जनीभ्यां नमः । ॐ देवाय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ उद्भाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ क्षोभणाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ देवाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

अथ हृदयादि न्यासः ॥ ॐ विश्वंविष्णुर्वषट्कारइतिहृदयागमनः । अमृतां शूद्भवोभानुरिति शिरसे स्वाहा । ब्रह्मण्योब्रह्मकृद्ब्रह्मोति शिखायै वषट् । सुवर्ण बिन्दुरक्षोभ्य इति कवचाय हूं । आदित्योज्योतिरादित्य इति नेत्रत्रायवोषट् । शार्ङ्गधन्वागदाधरः इति अस्त्राय फट् ।

इन तीनों न्यासों का अभिप्राय यह है कि पाठ करने वाला यह संकल्प करके पाठ करे कि मेरे अंग प्रत्यंग सब श्रीकृष्ण के अर्पण हैं और जब अंग प्रत्यंग भगवान के अर्पण कर दिये तो चित्त की वृत्ति भी एक हो जाती है ।

॥ अथ ध्यानम् ॥

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् ॥ विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ॥ लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम् । वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥ १ ॥

शान्तरूप शेषशायी, नाभि में कमल धारण करने वाले, देवों के देव, विश्व के आधार आकाश के समान व्यापक, मेघ के समान नील वर्ण, शोभायुक्त जिनके अंग, लक्ष्मीनाथ, कमलनयन योगीजनों के ध्यान में आने वाले, सम्पूर्ण लोक के नाथ, सांसारिक भय से दूर कर्ता, व्यापक विष्णु के लिये मेरा नमस्कार है ॥१॥

———

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ अथ विष्णु सहस्रनाम प्रारम्भ ॥

ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः। भूतकृद्भूतभृद् भावो भूतात्माभूतभावनः ॥ १ ॥ पूतात्मा १० परमात्मा च मुक्तानां परमागतिः। अव्ययः पुरुषः साक्षीः क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥ २ ॥

सर्वत्र बाहर भीतर और जगत् में प्रवेश करने वाले आप विश्व हैं। चराचर में व्यापक होने से आप विष्णु हैं। आप यज्ञादिक क्रियाओं के मूल कारण होने से वषट्कार हैं। भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों के स्वामी होने से आप भूतभव्यभवत्प्रभु हैं। स्वयं जीवों को उत्पन्न करने से आप भूतकृत हैं। प्राणियों के धारण पोषण करने से आप भूतभृत हैं। प्रपंच रूप से संसार को धारण करने से आप भाव हैं। प्राणियों की आत्मा के अन्तर्यामी होने से आप भूतात्मा हैं। आप प्राणियों को प्रेरणा करते और उनकी वृद्धि करते हैं, इससे आप भूतभावन हैं। आत्माओं के पवित्र करने से आप पूतात्मा हैं।१०। कार्य कारण से परे नित्य शुद्ध ज्ञान स्वभाव परम आत्मा होने से परमात्मा हैं। मुमुक्षु जहां से फिर नहीं आते हैं क्योंकि गीताजी में भी कहा है—'मामुपेत्य तु कौंतेय पुनर्जन्म न विद्यते' इससे आप मुक्तानांपरमगति हैं। अविनाशी होने से आप अव्यय हैं। नवद्वार के पुररूपी देह में निवास करने से आप पुरुष हैं। सब पदार्थों को साक्षात देखने से साक्षी हैं। शरीरों को जानने से क्षेत्रज्ञ हैं। किसी काल में क्षय नहीं होते इससे अक्षर है ॥१, २॥

योगी योगविदांनेता प्रधानः पुरुषेश्वरः २० । नारसिंहवपुः श्रीमान केशवः पुरुषोत्तमः ॥ ३ ॥ सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ३० । सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥ ४ ॥

जीव और परमात्मा के योग से आप योगी हैं। योगियों के प्रेरक होने से आप योगविदांनेता हैं। आप प्रकृति और पुरुष के ईश्वर हैं, इससे प्रधानपुरुषेश्वर हैं (२०) मनुष्यों के पाप कर्मादि दूर करने के हेतु आप नरसिंहवपु हैं। वक्षस्थल में लक्ष्मी के निकट निवास करने से आप श्रीमान् हैं। सुन्दर केशों के होने से अथवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश के स्वामी होने से अथवा केशी नामक दैत्य के मारने से आप केशव । पुरुषों में उत्तम होने से आप पुरुषोत्तम हैं ॥३॥ सब काल, सब जगह और सबके उत्पत्ति कर्ता होने से आप सर्व हैं। दुःखों को दूर करने और सुख देने से आप शर्व हैं। और कल्याण रूप होने से आप शिव। अचल और व्यापक होने से आप स्थाणु हैं। आप चराचर के आदि कारण हैं, इससे भूतादि हैं। आप अक्षय भण्डार हैं। इससे निधिरव्यय हैं(३०)गर्भादि क्लेशों से रहित धर्म की रक्षा के निमित्त अपनी इच्छा से प्रकट होते हैं, इससे आप सम्भव हैं। सम्पूर्ण फलों के दाता होने से आप भावन हैं। संसार को धारण करने से आप भर्ता हैं। आप ही से सब वस्तु जन्म लेती है, इससे आप प्रभव हैं। सम्पूर्ण क्रियाओं में आप समर्थ हैं, इससे प्रभु हैं। उपाधि रहित ऐश्वर्य के होने से आप ईश्वर हैं ॥४॥

स्वयम्भू : शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो ४० महास्वनः । अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥ ५ ॥ अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः । विश्व-कर्मा ५० मनुस्त्वष्टास्थविष्ठः स्थविरोध्रुवः ॥ ६ ॥

आप स्वयं प्रकट होते हैं, इससे स्वयम्भु है। कल्याण करने वाले हैं, इससे आप शम्भू हैं। अनेक शरीरों में आप भिन्न दृष्टि आते हैं, पर वास्तव में एक ही हैं, इससे आप आदित्य हैं। भक्तों पर आप कोमल कमलसी दृष्टि से देखते हैं, इससे आप पुष्कराक्ष हैं (४०) आपका वेद रूप बड़ा शब्द है, इससे आप महास्वन हैं। जन्म और मृत्यु से रहित होने के कारण आप अनादिनिधन हैं। अनन्त रूप से विश्व को धारण करते हैं, इससे धाता हैं। शेषादि (पृथ्वी धारण करने वालों) को भी धारण करने से विधाता हैं। ब्रह्मादिकों से धातु उत्कृष्ट हैं, इससे आप धातुरुत्तम हैं ॥५॥ आप प्रमाण रहित हैं, इससे अप्रमेय हैं। इन्द्रियों के स्वामी हैं, इससे आप हृषीकेश हैं, जगत की उत्पत्ति हेतु कमल आपकी नाभि में है, इससे आप पद्मनाभ हैं। देवताओं के स्वामी होने से आप अमर प्रभु हैं। यह विश्व आपकी रचना है, इससे आप विश्वकर्मा हैं (५०) आप मनन करने के योग्य हैं, इससे आप मनु हैं। सब पदार्थों में आप ही का प्रकाश है, इससे आप त्वष्टा हैं। अति स्थूल विश्व रूप होने से आप स्थविष्ट हैं। आप त्रिकाल में स्थिर हैं, इससे आप स्थविर है। सब काल और सब वस्तुओं में अचल होने से आप ध्रुव हैं ॥६॥

अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ६०। प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मंगलं परम् ॥ ७॥ ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ७०। हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥ ८॥

पंचेन्द्रिय करके ग्राह्य नहीं, इससे अग्राह्य कहते हैं, क्योंकि श्रुति भी कहती हैं—यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सहै" मन और वाणी आपको ग्रहण नहीं कर सकतीं, इससे आप अग्राह्य हैं। भूत, भविष्य, वर्तमान आपके निकट एकसा है, इससे आप शाश्वत हैं। श्याम वर्ण होने से आप कृष्ण हैं। 'कृषि' भू वाचक है और 'ण' निवृत्ति वाचक है, इनके संयोग से आप परब्रह्म कृष्ण हैं। पापियों पर लाल नेत्र करने से आप लोहिताक्ष हैं। प्रलय काल में सबका नाश करने से आप प्रतर्दन है (६०) ज्ञान और ऐश्वर्यादि षड्गुण सम्पन्न होने से आप प्रभूत हैं। आपका तीनों लोकों में प्रकाश है, इससे आप त्रिककुब्धाम हैं। पवित्रों को भी पवित्र करने से आप पवित्र हैं। नित्य मंगलरूप जो ब्रह्मानन्द उससे परे होने से आप मंगल परम हैं॥ ७॥ प्राणीमात्र को वशीभूत रखने से आप ईशान हैं। आप प्राणों को देने वाले हैं और काल रूप धारण कर प्राणों को हरने वाले हैं, इससे आप प्राणद हैं। प्राणों के भी प्राण होने से आप प्राण हैं। सबमें बड़े होने से आप ज्येष्ठ हैं। सबसे अधिक स्तुति के योग्य होने से आप श्रेष्ठ हैं। प्रजा के पति होने से आप प्रजापति हैं (७०) प्रकाश आपके गर्भ में है, इससे आप हिरण्यगर्भ हैं। पृथ्वी आपके भीतर है, इससे आप भूगर्भ हैं। लक्ष्मी के पति हैं, इससे आप मधु (विद्या) के जानने योग्य होने से आप माधव हैं। मधु दैत्य के मारने से आप मधुसूदन हैं॥८॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमःक्रमः ८० । अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥ ९ ॥ सुरेशः शरणं शर्म्म विश्वरेताः प्रजाभवः ९० । अहःसंवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥ १० ॥

सर्व शक्तिमान होने से आप ईश्वर हैं। शूरवीर होने से आप विक्रमी हैं। दिव्य धनुष धारी होने से क्योंकि —'राम शस्त्र भृतामहम' आपका वचन है कि धनुषधारियों में मैं राम हूं, इससे आप धन्वी हैं। आपको स्वाभाविक ज्ञान है और बहुत ग्रन्थ धारण करने की शक्ति है, इससे आप मेधावी हैं। बिना गरुड़ आप विश्व भर में जाते हैं, इससे आप विक्रम हैं। सब जगत् को आच्छादन करने से आप क्रम हैं (८०)आपसे उत्तम कोई नहीं, आपका ज्ञान अत्युत्तम हैं। इससे आप अनुत्तम हैं। आपको कोई घर्षणा नहीं दे सकता, इससे आप दुराधर्ष हैं। प्राणियों के लिये काम को जानते हैं इससे आप कृतज्ञ हैं। कार्य रूप होने से आप कृति हैं। आपके अनेक जीवात्मा हैं अर्थात् आप अपनी महिमा में प्रतिष्ठित हैं, इससे आप आत्मवान हैं। ॥९॥ देवताओं के स्वामी होने से आप सुरेश हैं, दुखियों के दुःख दूर करने से आप शरण हैं। परमानन्द रूप होने से शर्म हैं। विश्व के आदि कारण होने से आप विश्वरेता हैं सब प्रजा आपसे उत्पन्न हुई, इससे आप प्रजाभव हैं (९०) प्रकाश रूप हैं, इससे आप अहः हैं। काल रूप करके स्थति होने से आप संवत्सर हैं, व्याल की भांति ग्रहण नहीं किये जाते, इससे व्याल हैं। विश्वास करने वाले को आप विश्वास देते हैं, इससे आप प्रत्यय हैं। साक्षात् रूप सबको देखने से आप सर्वदर्शन हैं॥ १० ॥

अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धि सर्वादि १०० रच्युतः। वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिः स्टतः॥ ११ ॥ वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मा संमितः समः ११०। अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥ १२ ॥

आप पैदा हुए न होवें, इससे अज हैं। ब्रह्मादि के ईश्वर होने से आप सर्वेश्वर हैं। एक रस होने से आप सिद्ध हैं। स्वर्गादि प्राप्त होने से आप सिद्धि रूप हैं, इससे सिद्धि है। सब जीवों के आदि कारण होने से सर्वादि हैं (१००) नाश रहित होने से अच्युत हैं। सब कामनाओं के वर्षा करने वाले और पृथ्वी को जल से उधारने वाले हैं, इससे वृषाकपि हैं। आपकी आत्मा का कोई प्रमाण नहीं कर सकता, इससे रमेयातमा हैं। सब सम्बन्धों से पृथक और योग के ग्राह्य हैं, इससे आप सर्वयोग-बिनिःसृत हैं ।।११।। सब प्राणियों में आप वास करते हैं और आप में सब वास करते हैं, इससे आप वसु हैं। राग द्वेषादि क्लेशों से निष्पाप और प्रशस्त मन हैं, इससे वसुमना हैं, श्रुति कहती है—"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" आपका ज्ञान सत्य है, इससे सत्य हैं। सबमें समान बुद्धि और समान आत्मा होने से आप समात्मा हैं, सबमें अलग-अलग हैं और एक भी हैं, इससे नमित हैं, सब कालों में सब प्रकार के विकारों से रहित और लक्ष्मी सहित हैं, इससे सम हैं (११०) पूजा, स्तुति, स्मरण से अमोघ फल देते हैं, इससे अमोघ हैं। कमल रूप हृदय में योगीजनों से पूजित हैं और कमल से नेत्र हैं, इससे आप पुण्डरीकाक्ष हैं। धर्म ही है कर्म आपका, इससे वृषकर्मा हैं। धर्म ही है आकृति आपकी, इससे वृषाकृति हैं, क्योंकि—आपका वाक्य है कि धर्म के हेतु मैं युग-युग में अवतार धारण करता हूं॥ १२ ॥

रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः । अमृतः १२० शाश्वतः स्थाणुर्वरारोहोमहातपः ॥ १३ ॥ सर्वगःसर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः । वेदो वेदविद १३० व्यंगो वेदांगो वेदवित्कविः ॥ १४ ॥

प्रलय काल में सबका संहार और सबका दुःख दूर करते हैं, इससे आप रुद्र हैं । सहस्र शीर्षा पुरुष: ऐसी श्रुति है, आपके असंख्य सिर हैं इससे बहुशिरा हैं । मस्तक पर लोकों को धारण करने से वभ्रु हैं । विश्व आप ही से उत्पन्न हुआ है, इससे विश्वयोनि हैं । आप ही कल्याण कारक हैं और आपके नाम सुनने के योग्य हैं, इससे शुचिश्रवा हैं । मृत्यु से आप अलग हैं इससे अमृत हैं (१२०) । निरन्तर अचल स्थित होने से शाश्वतःस्थाणु हैं । श्रेष्ठ गोद होने से अथवा आपको प्राप्त होकर जन्म-मरण से रहित हो जाते हैं, इससे वरारोह हैं । वड़ा ऐश्वर्य और तपोज्ञान होने से आप महातपा हैं ॥ १३ ॥ सब जगह आपकी गमन शक्ति है इससे सर्वग हैं । सबको जानते हैं इससे आप सर्वबिद् हैं । सूर्यादि में भी आपका प्रकाश है इससे भानु हैं । आपके रणोद्योग से दुष्ट भाग जाते हैं । इससे आप विश्वक्सेन हैं । मनुष्यों का संहार करने से आप जनार्दन हैं । वेद आप ही का सत्य ज्ञान है इससे आप वेद हैं । वेद को जानने से आप वेदविद हैं(१३०) समस्त ज्ञान युक्त होने से अव्यंग हैं । वेद आपके अंग हैं इससे आप वेदांग हैं । वेदों को विचारने से आप वेदवित हैं । कामना पूर्ण करने से आप कवि हैं ।।१४।।

चतुरात्मा चतुर्व्यूह १४०
लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्म्माध्यक्षः कृताकृतः। चतुरात्मा चतुर्व्यूह
श्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥ १५ । भ्राजिष्णुर्भोजनंभोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः।
अनघोविजयो १५० जेताविश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ १६ ॥

सब लोकों को आप ज्ञान दृष्टि से देखते हैं इससे लोकाध्यक्ष हैं। देवताओं के समुद्रष्टा होने से आप सुराध्यक्ष हैं। अनुरूप फल देने को साक्षात् धर्म-अधर्म को देखने से आप धर्माध्यक्ष हैं। प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग के नियन्ता होने से कृताकृत हैं। ब्रह्मा, त्रिकाल और अखिल जीव सृष्टि के बढ़ाने की विभूति विष्णु सब जीव स्थित के हेतु हैं, इससे आप चतुरात्मा हैं। संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध ये चार व्यूह हैं इससे आप चतुर्व्यूह हैं (१४०) नृसिंह अवतार में चार दाढ़ धारण करने से चतुर्दंष्ट्र हैं। चारों वेद आपके भुजा हैं इससे आप चतुर्भुज हैं ॥१५॥ प्रकाशमान होने से भ्राजिष्ण हैं। माया है भोजन आपकी, इससे भोजन हैं। जीव रूप धारण करने से आप भोक्ता हैं। दुष्टों के तिरस्कार को सहने से सहिष्णु हैं। जगत् के आदि में आप ही हैं, इससे जगदादिज हैं। पाप रहित होने से अनघ हैं। संसार को वश में करने से आप विजय हैं। स्वाभाविक जिसमें सब जीव लीन हो जाते हैं इससे आप जेता हैं (१५०) विश्व के आदि कारण होने से विश्वयोनि हैं। क्षेत्र रूप से बारम्बार शरीर में निवास करने से पुनर्वसु हैं ॥१६॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः। अतीन्द्रः संग्रहः १६० सर्गा-

धृतात्मानियमोयमः ॥ १७ ॥ वेद्यो वैद्य सदायोगी वीरहा माधवो मधुः १७० ।
अतीन्द्रियोमहामायोमहोत्साहोमहाबलः ॥ १८ ॥

इन्द्र के छोटे भाई और ऊपर होने से आप उपेन्द्र हैं। वामन रूप से बलि की याचना की, इससे आप वामन हैं। वामन रूप से त्रिलोकी को नापा, इससे प्रांशु हैं। अक्षय फल के देने से आप अमोघ हैं। पूजक और उपासकों की शुद्धि करने से आप शुचि हैं। पूर्ण बल होने से आप ऊर्जित हैं। ज्ञानैश्चर्यादि गुणों में इन्द्र से आप परे हैं, इससे आप अतीन्द्र हैं। प्रलयकाल में सबको समेट लेते हैं, इसके आप संग्रह हैं (१६०)। सृष्टि को रचने से आप सर्ग हैं। जन्मादि रहित एक रस ात्मा होने से आप धृतात्मा हैं। सूर्य-चन्द्रादि चराचर अपने धर्म पर लगाने से आप नियम हैं। पापियों को दण्ड देने से आप यम हैं॥ १७ ॥ सबके शुभाशुभ को जानने से आप वेद्य हैं। सब विद्याओं का जानने से आप वैद्य हैं। सब काल में प्रकट होने से सदायोगी हैं। दुष्टों के वध करने से वीरहा हैं। माया और लक्ष्मी के पति होने से आप माधव हैं। पराई प्रीति को पैदा कराने से आप मधु हैं (१७०)। पांच ज्ञानेन्द्रियों से आप दूर हैं, इससे अतीन्द्रिय हैं। माया रहित भी बहुत माया करते हो, इससे महामाया हैं जगत् की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय में बहुत उत्साह होने से आप महोत्साह हैं। अति पराक्रमी होने से आप महाबल हैं ॥१८॥

महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युति। अनिर्देश्यवपुः श्रीमान १८०

मेयात्मामहाद्रिधृक् ॥ १९ ॥ महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतांगतिः । अनिरुद्धःसुरानंदोगोविंदो गोविंदांपतिः १९० ॥ २० ॥

बहुत बुद्धिमान होने से आप महाबुद्धि हैं। संसार में उत्पन्न करने की शक्ति होने से आप महावीर्य हैं। अति सामर्थ्यवान् होने से महाशक्ति हैं। भीतर बाहर अति प्रकाश होने से आप महाद्युति हैं। अप्रमाण शरीर होने से आप अनिर्देश्यवपु हैं। ऐश्वर्यवान होने से आप श्रीमान् हैं (१८०)। जोव आपकी बुद्धि और आत्मा को नहीं जान सकते, इससे आप अमेयात्मा हैं। अमृत के हेतु मन्द्राचल के उठाने से अथवा गौ गोपाल की रक्षा के निमित्त गोवर्धन उठाने से आप महाद्रिधृक हैं। बड़े धनुर्धर होने से आप महेष्वास हैं। पृथ्वी के पति होने से महीभर्ता हैं। वक्षस्थल में लक्ष्मी का निवास होने से श्रीनिवास हैं। वेदानुयायियों की गति हैं, इससे आप सताँगति हैं। आपकी गति को कोई नहीं रोक सकता, इससे आप अनिरुद्ध हैं। देवताओं को आनन्द देने वाले हैं, इससे आप सुरानन्द हैं। पृथ्वी, गौ, वेद-वाणी के रक्षक होने से आप गोविन्द हैं। वेदार्थ ज्ञाता ऋषियों के स्वामी होने से आप गोविंदांपति हैं (१९०) ॥ २० ॥

मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णोःभुजगोत्तमः । हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥ २१ ॥ अमृत्यु २०० सर्वदृकसिंहः संधाता संधिमान्स्थिरः अजो-दुर्मर्षणः शास्ताविश्रुतात्मासुरारिहा २१० ॥ २२ ॥

बहुत तेजस्वी होने से आप मरीचि हैं। गर्व को दमन करने से आप दमन हैं। सब शरीर में व्याप्त होने से हंस हैं। पक्षियों में गरुड़ आपकी विभूति है, इससे आप सुवर्ण हैं। शेष रूप होने से आप भुजगोत्तम हैं। प्रकाश आपकी नाभि में है, इससे आप हिरण्यनाभ हैं। नर-नारायण रूप धारण करके सुन्दर तप करने से सुतपा हैं। नाभि में कमल होने से पद्मनाभ हैं। ब्रह्मारूप से प्रजा को उत्पन्न करने से प्रजापति हैं ॥२१॥ विनाश न होने से अमृत्यु हैं(२००)स्वाभाविक प्राणियों के कर्मों को देखने से सर्वदृक हैं। पापों को नाश करने से आप सिंह हैं। प्रलय काल में सबको इकट्ठा कर लेने से आप संघाता हैं। फल के भोक्ता होने से सन्धिमान हैं। सदा एकरस होने से स्थिर हैं। कभी जन्म नही लेते, इससे अज हैं। दैत्यादिक आप पर क्रोध नहीं कर सकते हैं, इससे दुर्मर्षण हैं। श्रेष्ठ शिक्षा देने से आप शास्त हैं। सत्य ज्ञानादि लक्षण होने से आप विश्रुतात्मा हैं। राक्षसों को नाश करने से आप सुरारिहा हैं (२१०) ॥२२॥

गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः। निमिषोऽनिमिषःस्त्रग्वीवाचस्पति-रुदारधीः ॥ २३ ॥ अग्रणी २२० ग्रामणीः श्रीमान न्यायो नेता समीरणः। सहस्त्रमूर्द्धा विश्वात्मा सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात् ॥ २४ ॥

सब विद्याओं के उपदेष्टा और सबके पिता होने से आप गुरु हैं। ब्रह्मविद्या के उपदेष्टा होने से गुरुतम हैं। सब कामनाओं के स्थान अथवा प्रकाश रूप होने से आप धाम हैं। अविचल नियम होने से आप सत्य हैं। अत्यन्त पराक्रम होने से आप सत्य पराक्रम हैं। योग निद्रा में नेत्र बन्द करने

से निमिष हैं। नित्य चैतन्य रूप होने से अनिमिष हैं। वैजयन्ती माला के धारण करने से स्रग्वी हैं। वाणी के पति और उदार बुद्धि होने से वाचस्पतिरुदारधी हैं ॥२३॥ मुमुक्षुओं को अचल पद पर पहुंचाने से अग्रणी हैं (२२०)। जीवों के नियन्ता होने से ग्रामणी हैं। कांतिमान होने से श्रीमान हैं। पाप पुण्य का यथार्थ फल देने से आप न्याय हैं। जगत को अपने-अपने कार्य में लगाने से नेता हैं। पवन रूप से प्राणियों को जीवित रखने से समीरण हैं। असंख्य सिर होने से सहस्रमूर्द्धा हैं। विश्व की आत्मा होने से विश्वात्मा हैं। असंख्य होने से सहस्राक्ष हैं। असंख्य पद होने से सहस्रपात हैं ॥२४॥

आवर्तनो २३० निवृत्तात्मा संवृतः संप्रमर्दनः। अहःसंवर्तको वन्हिरनिलो धरणीधरः ॥२५॥ सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृक् २४० विश्वभुग्विभुः।
सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जन्हुर्नारायणो नरः॥ २६ ॥

संसार को अपनी माया में भुला रक्खा है, इससे आवर्तन हैं(२३०) संसार के बन्धनों से आप अलग हैं, इससे निवृत्तात्मा हैं। चारों ओर से जीवों को माया में घेरे रखने से सम्वृत हैं। रुद्र रूप से प्रजा का मर्दन करने से सम्प्रमर्दन हैं। सूर्य रूप से दिन को प्रकट कर कालचक्र से घुमाते हैं, इससे आप अहःसँवर्तक हैं। अग्निरूप होने से वन्हि हैं। श्वास रूप होने से अनिल हैं पृथ्वी को धारण करने से धरणीधर हैं ॥ २५ ॥ अपचार पर भी प्रसन्न होने से आप सुप्रसाद हैं। सदा प्रसन्न रहने से प्रसन्नात्मा हैं। संसार को धारण करने से विश्वधृक हैं(२४०)। विश्व का पालन करने से आप विश्वभुक हैं। ब्रह्मादिक अनेक रूप धारण करने से विभु हैं। सत्पुरुषों का सत्कार करने से सत्कर्ता हैं।

सत्पुरुषों से पूजे जाते हैं, इससे सत्कृत हैं। पर कार्यों को साधन करने से आप साधु हैं। सबको संहार करने से जन्हु हैं। पंचतत्वों में निवास करने से नारायण हैं। सबके नियन्ता होने से अथवा नररूप धारण करने से आप नर हैं ॥२६॥

असंख्येयोऽप्रमेयात्मा २५० विशिष्टःशिष्टकृच्छुचिः। सिद्धार्थःसिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥ २७ ॥ वृषाहीवृषभो विष्णुर्वृषपर्वा २६० वृषोदरः। वर्धनो वर्धमानश्चविविक्तः श्रुतिसागरः ॥ २८ ॥

अनगिनती नाम गुण होने से असंख्य हैं। आत्मा का प्रमाण न होने से आप अप्रमेयात्मा हैं। (२५०)। अधिक गुण सम्पन्न होने से विशिष्ट हैं। श्रेष्ठों का पालन करते और पवित्र रखते हैं इससे शिष्टकृच्छुचि हैं। सब कामनाओं से परिपूर्ण होने से सिद्धार्थ हैं। सत्य प्रतिज्ञ होने से आप सिद्धि संकल्प हैं। सिद्धि कर्म का फल देने से सिद्धिदा हैं। सिद्ध पदार्थों के साधक होने से आप सिद्धसाधक हैं ॥२७॥ धर्मरूप दिवस का प्रकाश करने से आप वृषाही हैं। भक्तों पर कामनाओं की वर्षा करने से आप वृषभ हैं। चराचर में व्याप्त होने से विष्णु हैं। आपके पास धर्म से पहुंचा जाये, इससे आप वृषपर्वा हैं (२६०)। धर्मरूप उदर होने से आप वृषोदर हैं। प्रजा को बढ़ाने से आप वर्धन हैं। आप बढ़ते हैं और चेतनों को बढ़ाते हैं, इससे आप वर्धमान हैं। इस प्रकार बढ़ने-बढ़ाने पर भी सबसे अलग हैं, इससे आप विविक्त हैं। श्रुति आप ही से निकली और आप ही में मिलती है, इससे आप श्रुतिसागर हैं ॥२८॥

सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो २७० वसुः। नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः॥ २९॥ ओजस्तेजो द्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः। ऋद्धः स्पष्टाक्षरो २८० मन्त्रश्चंद्रांशुभास्करद्युतिः॥ ३०॥

जगत की रक्षा करने वाली आपकी सुन्दर भुजा है, इससे आप सुभुज हैं। ध्यान में कठिनाई से आने पर आप दुर्धर हैं। ब्रह्मवाणी आपके मुख से निकली, इससे आप वाग्मी है। इन्द्रों के इन्द्र होने से आप महेन्द्र हैं। धन के दाता होने से वसुद है (२७०)। माया से स्वरूप को छिपाने से अथवा निर्मल हृदय में वास करने से आप वसु हैं। अनेक रूप होने से आप नैकरूप हैं। वाराहादि बड़े-बड़े रूप धारण करने से आप बृहद्रुप हैं। सब जीवों में यज्ञरूप परमात्मा यज्ञ के हेतु रहते हैं इससे शिपिविष्ट हैं। सबको प्रकाश करते हैं, इससे प्रकाशन हैं ॥२९॥ प्राण, बल, शौर्यादि गुण और कांतिको धारण करने से ओजस्तेजोद्युतिधर हैं। प्रकाश रूप आत्मा से प्रकाशात्मा हैं। सूर्य रूप से विश्व को तपाने से आप प्रतापन हैं। धर्म, ज्ञान, वैराग्ययुक्त होने से ऋद्ध हैं। स्पष्ट, उदात्त, ओंकार रूप होने से स्पष्टाक्षर हैं (२८०)। ऋक्, यजुः सामलक्षण मन्त्र रूप होने से आप मन्त्र हैं। तापत्रय से भस्मीभूत प्राणियों को चन्द्र-किरणवत् शीतल करने से आप चन्द्रांशु हैं। सूर्यवत् प्रकाशित होने से आप भास्करद्युति हैं ॥३०॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशिबिंदुः सुरेश्वरः। औषधं जगतः सेतुः सत्य-

भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः । कामहा

सत्यधर्मपराक्रमः २९० ॥ ३१ ॥

कामकृत्कान्तः कामः कामप्रद: प्रभुः ३०० ॥ ३२ ॥

समुद्र मन्थन में चन्द्रमा आपसे प्रकट हुआ है, इससे आप अमृतांशूद्भव हैं। सूर्यवत् सबके विद्यमान होने से आप भानु हैं। चन्द्रवत् औषधियों को रस पहुंचाने से आप शशिविन्दु हैं। देवताओं के ईश्वर होने से सुरेश्वर हैं। संसार रूपी रोग की औषधि होने से आप औषध हैं। संसार रूपी समुद्र से तारने के हेतु आप सेतु हैं, इससे जगतः सेतु हैं। धर्म, ज्ञानादि गुण और पराक्रम सत्य होने से आप सत्यधर्म पराक्रम हैं (२९०) ॥३१॥ भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों काल के स्वामी होने से भूतभव्य-भवन्नाथ हैं। पवन रूप होने से आप पवन हैं। पवित्र करने वाले होने से आप पावन हैं। कभी तृप्ति न होने से अनल हैं। मुमुक्षु और भक्तों के काम को नाश करने से आप कामहा हैं। कामियों की कामना पूर्ण करने से अथवा प्रद्युम्न के पिता होने से कांत हैं। इच्छाओं के पूर्ण करने से कामकृत हैं। भक्तों की कामना पूर्ण करने से कामप्रद हैं। सामर्थ्यवान होने से प्रभु हैं (३००) ॥३२॥

युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः । अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्र-

जिदनन्तजित ॥ ३३ ॥ इष्टो विशिष्टः ३१० शिष्टेष्टः शिखंडी नहुषो वृषः ।

क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥ ३४ ॥

काल भेद करके युगों के करने से युगादिकृत हैं। युगों के बारम्बार करने से युगावर्त हैं।

अनेक मायारूप होने से नैकमाया हैं। प्रलय में सबको समेटकर अपने में मिलाने से महाशन हैं। वृद्धि आदि इन्द्रियों से नहीं जाने जाते, इससे अदृश्य हैं। अप्रकट रूप होने से अव्यक्त रूप हैं। सहस्रों को जीतने से सहस्रजित हैं। क्रीड़ा करके अनन्त विश्व को जीतने से अनन्तजित हैं ॥३३॥ यज्ञ से पूजा होने से आप इष्ट हैं। श्रेष्ठ होने से आप वशिष्ठ हैं (३१०)। श्रेष्ठ विद्वानों के इष्ट होने से शिष्टेष्ट हैं। मोरपक्षधारी गोपवेष होने से आप शिखण्डी हैं। अपनी माया करके बाँधने से नहुष हैं। धर्म रूप होने से वृष हैं। क्रोध को नाश करने क्रोधहा हैं। दुष्टों पर क्रोध करने से क्रोधाकृत हैं। जगत के रचने से कर्ता हैं। सब विश्व में बाहु होने से आप विश्वबाहु हैं। पूजा अथवा पृथ्वी को ग्रहण करने से महीधर हैं ॥३४॥

अच्युतः ३२० प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः। अपान्निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥ ३५ ॥ स्कन्दः स्कन्दधरो ३३० धुर्यो वरदो वायुवाहनः। वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥ ३६ ॥

विकार रहित होने से अच्युत हैं (३२०)। जगत के उत्पत्यादि कर्म से विख्यात होने से प्रथित हैं। जीवन के वायुरूपी प्राण होने से आप प्राण हैं। असुरों के प्राण लेते हैं, इससे प्राणदः हैं। इन्द्र के छोटे भ्राता होने से वासवानुज हैं। आप नदियों में सागर होने से अपानिधि हैं। सब प्राणियों में निवास करते हैं, इससे आप अधिष्ठान हैं। सबको कर्मानुसार फल देने से अप्रमत्त हैं। अपनी अपूर्व महिमा के कारण आप प्रतिष्ठित हैं ॥३५॥ अमृतरूप करके बरसाने से आप स्कन्त हैं। धर्म को धारण करने से

स्रन्दधर हैं (३३०)। सब जीवों के अग्रगण्य होने से आप धुर्य हैं। मनवांछित फल देने से आप वरद हैं। वायु को चलाने से आप वायु वाहन हैं। वसुदेव के पुत्र होने से आप वासुदेव हैं। जगत को प्रकाशित करते हैं, इससे वृहदभानु हैं। सबके आदि कारण होने से आदिदेव हैं। देवताओं के शत्रु पुरु के मारने से आप पुरन्दर हैं ॥३६॥

अशोकस्तारणस्तारः ३४० शूरःशौरिर्जनेश्वरः। अनुकूलःशतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥ ३७ ॥ पद्मनाभोऽरविंदाक्षः पद्मगर्भः ३५० शरीरभृत। महर्द्धिऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुड़ध्वज ॥ ३८ ॥

शोक रहित होने से अशोक हैं। संसार सागर से तारते है अतएव तारण हैं। मृत्यु के भय से छुड़ाते हैं, इससे तार हैं (४०) पराक्रमी होने से शूर हैं। शूरसेन के कुल में होने से शौरि हैं। जीव जन्तुओं के ईश्वर होने से जनेश्वर हैं। सबके अनुकूल होने से अनुकूल हैं। धर्म की रक्षा के निमित्त अनेक जन्म लेने से शतावर्त हैं। कमल हाथ में होने से पद्मी हैं। कमल के से नेत्र होने से पद्मनिभेक्षण हैं ॥३०॥ पद्म नाभि में स्थित होने से पद्मनाभ हैं। कमल नेत्र हैं, इससे अरिविन्दाक्ष हैं। हृदयरूपी कमल में योगियों के उपास्य होने से पद्मगर्भ है(३५०)॥ अन्नादिक से प्राणियों का पोषण करने से शरीरभूत हैं। बहुत ऐश्वर्यवान् होने से महद्ध हैं प्रपंच से वढ़े, इससे ऋद्ध हैं पुरातन आत्मा होने से वृद्धात्मा हैं। विशाल नेत्र होने से महाक्ष हैं। ध्वजा में गरुड़ चिन्ह होने से गरुड़ध्वज हैं ॥३८॥

अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो ३६० हविर्हरिः । सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान समितिंजय. ॥ ३९ ॥ विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ३७० । महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥४०॥

किसी के समान नहीं इससे अतुल हैं। जीर्ण शरीर में प्रकाशमान होने से शरभ हैं। चराचर आपसे डरते हैं, इससे भीम हैं। उत्पत्ति, स्थिति प्रलय काल को जानने से आप समयज्ञ हैं (३६०)। यज्ञ के भोगों को लेने से आप हविर्हरि। सब प्रमाणों से आप जाने जाते हैं, अतएव आप सर्व-लक्षण लक्षण्य हैं। लक्ष्मी के वक्षःस्थल में निवास होने से लक्ष्मीवान हैं। युद्ध को जीतने से समितिज्य हैं ।।३९।। नाशरहित होने से विक्षर हैं। मत्स्य रूप धारण करने से आप रोहित हैं। मुमुक्षु आपको ढूंढ़ते हैं, इससे आप मार्ग हैं। उपादान निमित्त कारण होने से आप हेतु हैं। यशोदा ने रस्सी से बाँधे अतएव आप दामोदर हैं। सबके अपराधों को सहते, इससे सह हैं (३७०)। गिरि रूप होने से महीधर हैं। ऐश्वर्य प्रकट करने से महाभाग हैं। मन से भी अधिक वेग होने से वेगवान हैं। प्रलय काल मे संसार का भक्षण करने से अमिताशन हैं।।४०।।

उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः । करणं ३८० कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ४१ ॥ व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदोध्रुवः ३९० । परर्द्धिः परम स्पष्ट तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥४२॥

संसार के उत्पत्ति, पालन, नाश करने से आप उद्भव है। प्रकृति और पुरुष को क्षोभ कराने
से आप शोभणा हैं। एकोदेव होने से देव हैं। जगद्गर्भा होने से आप श्री र्भ हैं। परमऐश्वर्यवान्
होने से परमेश्वर हैं। संसार के साधक होने से करण हैं (३८०)। जगत की उत्पत्ति में उपादान होने
से आप कारण हैं। जगत के स्वतंत्र रचने वाले हैं, इससे कर्ता हैं। विचित्र भवनों के करने से आप
विकर्ता हैं। नहीं जाने जाते इससे गहन हैं। मायारूप हैं, इससे गुह हैं ॥४१॥ सच्चितम रूह होने से
व्यवसाय हैं। आपमें सबकी व्यवस्थिति , इससे व्यवस्थान हैं। प्राणियों का प्रलय में आपका स्थान
है, इससे आप संस्थान हैं। कर्मानुसार सबको स्थान देने से स्थानद हैं। अविना[illegible] हैं।
(३९०)। सबसे परे हैं, इससे परर्द्धि हैं। अनन्य सिद्धि होने से परमस्पष्ट हैं। परमानन्द रूप हो[illegible]
तुष्ट हैं। गुणों से भरपूर हैं, इससे पुष्ट हैं। मनवांछित फल देने वाले नेत्र होने से शुभेक्षण हैं ॥४२॥

रामोविरामो विरजो मार्गो नेयो ४०० नयोऽनयः । वीरः शक्तिमतां
श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ४३ ॥ वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः ४१०
प्रणवः पृथुः हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तोवायुरधोक्षजः ॥४४॥

योगीजनों के निवास स्थान होने से राम हैं। प्राणियों को आराम देने से विराम हैं। रजोगुण
रहित होने से विरज हैं। मुमुक्षुओं के आप स्थान हैं, इससे मार्ग हैं। सण्मार्ग में प्रेरक होने से नेय
हैं। (४००)। जीवों को अपना करते हैं, इससे नय हैं। कोई नेता नहीं, इससे अनय हैं, पराक्रमी होने
से वीर हैं। ब्रह्मादिकों से भी उत्तम शक्ति होने से शक्तिमतां श्रेष्ठ हैं। धर्म करके आराधन के योग्य

होने से धर्म हैं। धार्मिकों में उत्तम होने से धर्मविदुत्तम हैं।।४३।। विविध प्रकार की कुण्ठित गतियों को नाश करने से आप बैकुण्ठ हैं। पुर में शयन करने से पुरुष हैं। क्षेत्रज्ञरूप से सबके प्राण होने से प्राण हैं। प्रलय में प्राणियों का नाश करने से प्राणद हैं (४१०)। सब आपको प्रणाम करते हैं, इससे प्रणव हैं। संसार रूप से विस्तार को प्राप्त हुए, इससे पृथु हैं। ब्रह्मा आपके गर्भ से हुआ, इससे हिरण्य गर्भ हैं। देवताओं के शत्रुओं को मारने से शत्रुघ्न हैं। सब कार्यों में व्याप्त होने से व्याप्त हैं। वायुरूप होने से वायु है, आपके आश्रय से अधोगति नहीं होती, इसस आप अधोक्षज हैं।।४४।।

ऋतु सुदर्शन काल ३२० परमेष्ठी परिग्रहः। उग्रः सम्वत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥ ४५ ॥ विस्तारः स्थावरः स्थाणुः ४३० प्रमाणं बीजमव्ययम्। अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥४६॥

ऋतु पैदा करने से ऋतु हैं भक्तों को आपका दर्शन निर्वाण फल देता है, इससे सुदर्शन हैं। समय रूप से सबको गिनते हो, इससे काल हैं (४२०) हृदयाकाश रूप होने से परमेष्टी हैं। भक्तों से अर्पित पत्र-पुष्प को ग्रहण करने से आप परिग्रह हैं। सूर्यादिकों को भय देने से आप उग्र हैं। प्राणी सुखपूर्वक आप में निवास करते हैं, इससे सम्वत्सर हैं। जगत के रचने में कुशल होने से आप दक्ष हैं। संसार समुद्र में नाना प्रकार के क्लेशों से प्राणियों को विश्राम देने से आप विश्राम हैं। विश्व के रचने में बड़े चतुर हो, इससे विश्वदक्षिण हैं।।४५।। समस्त जगत का विस्तार करने से विस्तार हैं। चराचर आप में निवास करते हैं, इससे स्थावर हैं, त्रिकाल में एक रस होने से स्थाणु हैं (४३०)।

सब वस्तुओं के प्रमाण होने से आप प्रमाण हैं। सब चराचर के बीजरूप होने से आप बीजमव्यय हैं। सुख रूप होने से आप अर्थ हैं। किसी से कुछ कामना नहीं रखते, इससे आप अनर्थ हैं। अन्नादिक के बड़े कोष होने से आप महाकोष हैं। सुखरूप, बड़े भोगों के भोगने वाले हैं, इससे महाभोग हैं, भोग साधन रूप बड़ा धन होने से महाधन हैं ॥४६॥

अनिर्विण्ण: स्थविष्ठो भू ४४० धर्म्मयूपो महामुख:। नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षम: क्षाम: समीहन. ॥४७॥ यज्ञ इज्यो महेज्य ४५० श्चक्रतु: सत्रं सतांगति। सर्वदर्शी विमुक्ताऽऽत्मा सर्वज्ञोज्ञानमुत्तमम् ॥४८॥

सब कामनाओं से परिपूर्ण हैं, इससे अनिर्विण्ण हैं। विराट होने से आप स्थाविष्ट हैं। अजन्मा होने से आप भू हैं (४४०)। धर्म के स्तम्भ होने से आप धर्मयूप हैं। आपके लिए बड़े-बड़े यज्ञ किये जाते हैं, इससे आप महामुख हैं। सब तारागणों के नेमिरूप होने से नक्षत्रनेमि हैं। नक्षत्रों के स्वामी चन्द्रमारूप होने से आप नक्षत्री हैं। पृथ्वी के समान सबको सहने से क्षम हैं। आत्मा-रूप से सब प्राणियों में स्थित हैं, इससे आप क्षाम हैं, सृष्टि रचने के हेतु चेष्टा कराने से समीहन हैं ॥ ४७ ॥ यज्ञरूप होने से आप यज्ञ हैं। आप यजन के योग्य हैं, इससे इज्य हैं। यज्ञ के योग्य होने से आप महेज्य हैं (४५०)। यूप सहित यज्ञरूप होने से क्रतु है। यज्ञों की रक्षा करने से आप सत्र हैं। महात्माओं की आप ही गति हैं, इससे सतांगति हैं। सबको आप देखते हैं, इससे सर्वदर्शी हैं। स्वाभाव

करके मुक्त होने से आप विमुक्तात्मा हैं। सबको जानने से सर्वज्ञ हैं। ज्ञानवान होने से आप ज्ञानमुत्तमम् हैं ॥४८॥

सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः ४६० सुघोषः सुखदः सुहृत। मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥४९॥ स्वापनः स्ववशो व्यापी ४७० नैकात्मा नैककर्मकृत। वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥५०॥

अभय ज्ञान देने से आप सुव्रत हैं। प्रसन्न मुख होने से आप सुमुख हैं। लघुरूप रखने से आप सूक्ष्म हैं (४६०)। सुन्दर वाणी कहने से आप सुघोष हैं। भक्तों को सुख देते हैं, इससे सुखद हैं। श्रेष्ठ भाव होने से सुहृत हैं। मन को हरते हैं, इससे मनोहर हैं। क्रोध को जीतने से आप जितक्रोध हैं। पराक्रमी भुजा होने से आप वीरबाहु हैं। अधर्मियों का नाश करने से विदारण हैं ॥४९॥ प्राणियों को गहरी नींद में सुलाने से आप स्वापन हैं। स्वतन्त्र होने से आप स्ववश हैं। सर्वव्यापक होने से आप व्यापी हैं (४७०)। अनेक रूप होने से आप नैकात्मा है। जगत् के अनेक कर्म करते हैं, इससे आप नैककर्मकृत हैं। अखिल आप में निवास करता है, इससे वत्सर हैं। भक्तों पर स्नेह करने से वत्सल हैं। वत्सलरूप होने से वत्सी हैं। अनेक गुण आपके गर्भ में हैं, इससे रत्नगर्भा हैं। धनों के स्वामी होने से आप धनेश्वर हैं ॥५०॥

धर्मगुप् धर्मकृद्धर्मी ४८० सदसत्क्षरमक्षरम्। अविज्ञाता सहस्रांशु-

विधाता कृतलक्षणः ॥ ५१ ॥ गभस्तिनेमिः सत्वस्थः सिंहो ४९० भूत महेश्वरः।
आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥ ५२ ॥

धर्म की रक्षा करने से धर्मगुरु हैं। धर्म संस्थापन करने से धर्मकृत हैं। धर्म के आधार होने से आप धर्मी हैं (४८०)। आत्मा और देहरूप सत्य और असत्य हैं, इससे आप सद्सत् हैं। प्राणीमात्र की देह नाशवान है, इससे क्षर हैं, अविनाशी होने से अक्षर हैं। आपको भेदाभेद का ज्ञान नहीं इससे अविज्ञाता हैं। सूर्यवत् तेजरूप होने से सहस्रांशु हैं। समस्त प्राणियों के धारण करने से आप विधाता हैं। आप चैतन्यरूप होने से कृतलक्षण हैं। ॥५१॥ सूर्यरूप में स्थित हैं, इससे आप गभस्तिनेमी हैं। सत्वगुण का प्रकाश करने से आप सत्वस्थ हैं। सिंह के समान होने से सिंह हैं (४९०)। सब प्राणियों के महान ईश्वर होने से भूतमहेश्वर हैं। सबके आदि कारण होने से आदि देव हैं। आपसे परे कोई देव नहीं है इससे आप महादेव हैं। देवताओं में प्रधान होने से आप देवेश हैं। भरण-पोषण करने से आप देवभृत हैं। सबके शिक्षक होने से आप गुरु हैं ॥५२॥

उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः ५०० पुरातनः। शरीरभूतभृद्भोक्ता
कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥ ५३ ॥ सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः ५१०।
विनयो जयः सत्यसन्धोदाशार्हः सात्वतांपतिः ॥ ५४ ॥

सर्वोत्कृष्ट होने से उत्तर हैं। गौओं के पालने से गौपति हैं। प्राणीमात्र की रक्षा करने से

गोप्ता हैं। ज्ञान से जाने जायें, इससे ज्ञानगम्य हैं (५००)। आदिदेव होने से आप पुरातन हैं। शरीर का पोषण करने से शरीर भूतमृत हैं। परमानन्द के भोगने से भोक्ता हैं। वानराधीश होने से आप कपीन्द्र हैं। धर्म की भर्यादा होने से आप भूरिदक्षिण हैं ॥५३॥ देवतारूप होकर सोमपान करने से आप सोमप हैं। मोहनी रूप से अमृत पिलाने से आप अमृतप हैं। पुष्टि करने से सोम है। सबको जीतने से पुरुजित हैं। विश्वरूप धारण करने से पुरुसत्तम हैं (५१०)। दुष्ट को दण्ड देने से विनय हैं और जीतने से जय हैं। सत्यप्रतिज्ञ होने से आप सत्यसन्ध हैं। दान के योग्य होने से दाशार्ह हैं। यादवों के पति होने से आप सात्वतांपति हैं ॥५४॥

जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ५२० । अंभोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥ ५५ ॥ अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः । आनन्दो ५३० नन्दनोनंदः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥ ५६ ॥

प्राणों को धारण करने से आप जीव हैं। नम्र होने से विनयता हैं। सबके धर्माधर्म को देखने से साक्षि हैं। मुक्तिदाता होने से मुकुन्द हैं। अपार बल के होने से अमितविक्रम हैं (५२०)। देवताओं के निवास स्थान होने से अम्भोनिधि हैं। व्याप्त होने से अनन्तात्मा हैं, क्षीरसागर में शयन करने से महोदधिशय हैं। प्राणियों का नाश करने से अन्तक हैं। ॥५५॥ अजन्मा होने से आप अज हैं वड़ी पूजा के योग्य होने से महार्ह हैं। नित्य सिद्धरूप होने से स्वभाव्य हैं। रागद्वेषादि जीत लेने से जितामित्र हैं। ज्ञानियों को आनन्द देने से प्रमोदन हैं। आनन्दस्वरूप होने से आनन्द हैं (५३०)। सबको प्रसन्न

करने से नन्दन हैं। विषयवासनारूप सुख के न होने से नन्द हैं। धर्म ज्ञानादिक सत्य होने से आप सत्य धर्म हैं। वामन रूप धारण करने से आप त्रिविक्रम हैं ॥५६॥

महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः। त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाश्रृंगः ५४० कृतांतकृत् ॥ ५७ ॥ महावराहो गोविंदः सुषेणः कनकांगदी। गुह्यो गभीरो गहनोगुप्तश्चक्रगदाधरः ५५० ॥ ५८ ॥

वेदों के ज्ञाता हैं, इससे महर्षि कपिलाचार्य हैं। थोड़े धर्म को बहुत मानने से कृतज्ञ हैं। पृथ्वी के रक्षक होने से मेदिनीपति हैं। तीन पैर से त्रिलोकी नापी इससे त्रिपद हैं। देवताओं के स्वामी होने से त्रिदशाध्यक्ष हैं। वाराह रूप धारण करने से महाश्रृंग हैं (५४०)। सृष्टि का संहार करने से कृतान्तकृत हैं ॥५७॥ बड़े वराह रूप होने से महावराह हैं। वेदान्त वाक्यरूप वाणी से जाने जायें सो गोविन्द हैं। शुद्ध गुणात्मक हैं, इससे सुषेण हैं। सुवर्ण के बाजू पहनने से आप कनकांगदी हैं। गुप्त रहने से गुह्य हैं। ज्ञान, ऐश्वर्य से गंभीर हैं। आपकी थाह पाना कठिन है, इससे आप गहन हैं। मन और वाणी से अगोचर हैं, इससे आप गुप्त हैं। गदा व चक्र धारण करने से चक्रगदाधर हैं (५५०) ॥५८॥

वेधाः स्वांगोऽजितः कृष्णोदृढः संकर्षणोऽच्युतः। वरुणो वारुणोवृक्षः

पुष्कराक्षो ५६० महामनाः ॥ ५९ ॥ भगवान भगहा नंदी वनमाली हलायुधः ।
आदित्योज्योतिरादित्यःसहिष्णुर्गतिसत्तमः ५७० ॥ ६० ॥

सृष्टि के धारण करने से वेधा हैं। बहुरूपिया होने से स्वांग हैं। अजय होने से अजित हैं। श्यामवर्ण हैं, इससे आप कृष्ण हैं। अच्युतस्वरूप होने से दृढ़ हैं। सब प्रजा को अपनी ओर खींच लेते हैं, इससे संकर्षणोच्युत हैं। जलाधिकारी होने से वरुण हैं। वशिष्ठ रूप होने से वारुण हैं वृक्ष की तरह अचल होने से वृक्ष हैं। हृदय में प्रकाश करने से पुष्कराक्ष हैं (५६०)। मन ही से उत्पत्ति, पालन, नाश करने से महामना हैं ॥५९॥ सबके पूज्य होने से भगवान हैं। प्रलयकाल में नाश करने से भगहा हैं। सुखरूप होने से नन्दी हैं। बैजन्ती माला के पहनने से वनमाली हैं। हल आयुध लिया, इससे हलायुध हैं। अदिति के पुत्र होने से आदित्य हैं। सूर्य में ज्योति होने से ज्योतिरादित्य हैं। सुख दुःखादिकों के सहने से सहिष्णु हैं। सद्गति देते हैं। इससे आप गतिसत्तम हैं (५७०) ।६०।

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणोद्रविणप्रदः । दिविस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिर-
योनिजः ॥ ६१ ॥ त्रिसामासामगः ५८० सामनिर्वाणं भेषजं भिषक् । सन्यास-
कृच्छमः शांतो निष्ठा शान्तिः परायणः ॥ ६२ ॥

धनुष धारण करते हैं, इससे सुधन्वा हैं। परशुराम रूप होने से आप खण्ड परशु हैं। दारुण रूप हैं, इससे दारुण हैं। मनवांछित फल के देने से आप द्रविणप्रद हैं। स्वर्गरूप होने से दिविस्पृक हैं।

चारों वेदों का विस्तार करने से सर्वदृग्व्यास हैं। विद्या के पति होने से आप वाचस्पति हैं। बिना योनि पैदा होने से आयोनिज हैं ॥६१॥ वेदत्रयी द्वारा स्तुति के योग्य होने से आप त्रिसामा हैं। सामवेद से गाने योग्य हैं, इससे सामग हैं (५८०)। परमानन्द रूप होने से सामनिर्वाण हैं। औषधि रूप होने से भेषज हैं। वैद्य रूप होने से भिषक हैं। सन्यासाश्रम निर्माण करने से आप सन्यासकृत हैं। शान्ति देने से आप शम हैं। शान्तिरूप होने से आप शान्त हैं। सबके आधार हैं, इससे आप निष्ठा हैं। शान्त स्वभाव हैं, इससे आप शान्ति हैं। सबको प्राप्य होने से आप परायण हैं ॥६२॥

शुभांगः ५९० शांतिदः स्त्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥ ६३ ॥ अनिवर्ती ६०० निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः । श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतांवरः ॥ ६४ ॥

सुन्दर अंग होने से शुभांग हैं (५९०) शान्ति देते हैं, इससे शान्तिदः हैं। प्रजा को रचने से स्त्रष्टा हैं। लीला करने से आप कुमुद हैं। शेषशायी होने से कुवजेशय हैं। गोओं के हितकारी होने से गोहित हैं। भूमि के पति हैं, इससे गोपति हैं। गुप्त होने से आप गोप्ता हैं। कृपालु होने से आप वृषभाक्ष हैं। धर्मप्रिय होने से आप वृषप्रिय हैं ॥६३॥ देवासुर संग्राम और धर्म से आप पीछे नहीं हटते, इससे अनिवर्ती हैं (६००)। विषय वासना से निवृत होने से निवृत्तात्मा हैं। संसार को सूक्ष्म करने से संक्षेप्ता हैं। उत्पन्न किए हुए की रक्षा करने से क्षेमकृत हैं। स्मरण मात्र से पवित्र करते हैं, इससे शिव हैं। वक्षस्थल में श्रीवत्स चिन्ह धारण करने से श्रीवत्सवक्षा हैं। हृदय में लक्ष्मी का

निवास होने से श्रीवास है। लक्ष्मी के पति होने से श्रीपति हैं। समस्त सम्पत्तियों तथा ऐश्वर्यों से युक्त तथा श्रेष्ठ होने से श्रीमताम्वर हैं ॥६४॥

श्रीद:श्रीश: ६१० श्रीनिवास:श्रीनिधि:श्रीविभावन:। श्रीधर: श्रीकर: श्रेय: श्रीमांल्लोकत्रयाश्रय: ॥ ६५ ॥ स्वक्ष:स्वंग: ६२० शतानंदोनंदिर्ज्योतिर्गणेश्वर:। विजितात्माविधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशय: ॥ ६६ ॥

श्री देने से श्रीद: हैं लक्ष्मीकान्त होने से श्रीश: हैं (६१०)। लक्ष्मीजी के हृदय में निवास करने से श्रीनिवास हैं। लक्ष्मी के निवास स्थान होने से श्रीनिधि हैं। कर्मानुसार विभव देने से श्रीविभाजन हैं। जगजननी लक्ष्मी को धारण करने से आप श्रीधर हैं। उपासकों के कल्याण करने से श्रीकर हैं। जीवों का कल्याण करने से श्रेय हैं। लक्ष्मीवान होने से श्रीमान हैं। त्रिलोकी नाथ होने से लोक-त्रयाश्रय हैं ॥६५॥ सुन्दर नेत्र होने से स्वक्ष हैं। सुन्दर अंग होने से स्वंग हैं (६२०)। सैकड़ों रूप होने से शतानन्द हैं। परमानन्द रूप होने से नन्दी हैं। रक्षत्रादिकों के ईश्वर होने से ज्योतिर्गणेश्वर हैं। मन को विजय करने से विजितात्मा हैं। आपके आत्मस्वरूप को कोई नहीं जान सकता, इससे अवि-धेयात्मा हैं। सत्य, कीर्ति होने से सत्कीर्ति हैं। सबके संशयो को दूर करने से छिन्नसंशय हैं ॥६६॥

उदीर्ण: सर्वतश्चक्षुरनीश: ६३० शाश्वत: स्थिर:। भूशयो भूषणो भूति-

विशोकः शोकनाशनः ॥ ६७ ॥ अर्चिष्मानर्चितः कुंभोविशुद्धात्मा ६४० विशोधनः। अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥ ६८ ॥

श्रेष्ठ होने से उदीर्ण हैं। सबको देखते हैं, इससे सर्वतश्चक्षु हैं। कोई ईश नहीं, इससे अनीश हैं (६३०)। विकार रहित होने से शाश्वतस्थिर हैं। पृथ्वी पर सोने से आप भूशय हैं। पृथ्वी को भूषित करने से भूषण हैं। चराचर में आप विभूति हैं, इससे भूति हैं। शोक रहित होने से विशोक हैं। भक्तों के शोक का नाश करने से आप शोक नाशक हैं॥६०॥ सूर्य-चन्द्रमा दिकों के प्रकाशक होने से अर्चिष्मान् हैं। ब्रह्मादिक आपकी पूजा करें, इससे अर्चित हैं। आप में सब वस्तु लीन हैं, इससे कुम्भ हैं। विशुद्ध आत्मा होने से आप विशुद्धात्मा हैं (६४०)। पाप नाशक होने से विशोधन हैं। शत्रु आपको नहीं रोक सकते, इससे अनिरुद्ध हैं। आपका कोई विरोधी नहीं, इससे अप्रतिरथ हैं। बहुत धन होने से प्रद्युम्न हैं। अपरिमित पराक्रम होने से अमित विक्रम हैं ॥६८॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः। त्रिलोकात्मा ६५० त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥ ६९ ॥ कामदेवः कामपालः कामी कांतः कृतागमः। अनिर्देश्यवपु ६६० विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः ॥ ७० ॥

कालनेमि असुर को मारने से कालनेमिनिहा हैं। बलवान होने से वीर हैं। शूरकुल में उत्पन्न

होने से शौरि हैं। शूरवीरों के भी ईश्वर होने से शूरजनेश्वर हैं। तीनों लोकों की अन्तरात्मा होने से त्रिलोकात्मा हैं (६५०)। तीनों लोकों के ईश्वर होने से त्रिलोकेश हैं। सूर्य चन्द्रमा की किरण सदृश आपके केश हैं, इससे आप केशव हैं। केशी दैत्य को मारने से केशिहा हैं। संसार को हरते हैं, इससे आप हरि हैं ॥६९॥ सौन्दर्ययुक्त होने से कामदेव हैं। कामियों की इच्छाओं को पूर्ण करते हैं, इससे कामपाल हैं। कामनाओं से पूर्ण होने से कामी हैं। गोपीनाथ होने से कान्त हैं। श्रुति स्मृति रूप आगम करने से कृतागम हैं। अवर्णनीय दिव्य शरीर होने से अनिर्देश्यवपु हैं (६६०)। व्यापक होने से विष्णु हैं। पराक्रमी होने से वीर हैं। देश, काल, वस्तु से अपरिच्छिन्न होने से अनन्त हैं। अर्जुन रूप होने से अनन्त धनों को जीतने से धनञ्जय हैं ॥७०॥

ब्रह्मण्योब्रह्मकृद्ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः। ब्रह्मविद ६७० ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः॥ ७१ ॥ महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः। महा-क्रतुर्महायज्वा ६८० महायज्ञो महाहविः॥ ७२ ॥

तप, वेद, सत्य ज्ञान के अधिकारी होने से ब्रह्मण्य हैं। तपादि के करने से ब्रह्मकृत हैं। ब्रह्मा-रूप से सबको रचते हैं, इससे ब्रह्मा हैं। सत्यादि लक्षणों से युक्त वृहत होने से ब्रह्म हैं। तपादिकों के बढ़ाने से आप ब्रह्मविवर्धन हैं। वेद और वेदार्थ को जानते हैं, इससे ब्रह्मविद हैं (६७०)। वेदों का उपदेश करने से आप ब्राह्मण हैं। वेदादिक आपके रूप हैं, इससे ब्रह्मा हैं। आत्म भू वेद को आप जानते हैं, इससे ब्रह्मज्ञ हैं। वेदवेत्ता आपको प्रिय हैं, इससे ब्राह्मणप्रिय हैं ॥७१॥ वामनरूप में

बड़ी २ डग भरीं, इससे महाक्रम हैं। बड़े २ कर्म करने से आप महाकर्मा हैं। सूर्यादिक आपके तेज होने से महातेजा हैं। शेषरूप होने से महोरग हैं। बड़े २ यज्ञरूप होने से महाक्रतु हैं। अश्वमेध यज्ञ करने से महायज्वा हैं (६८०)। यज्ञरूप होने से महायज्ञ हैं। प्रलय में सबको अपने में लीन कर लेते हैं, इससे आप महाहवि हैं ॥७२॥

स्तव्यःस्तवप्रियःस्तोत्रं स्तुतिःस्तोता रणप्रियः। पूर्णः पूरयिता ६९० पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥ ७३ ॥ मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः। वसुप्रदो वासुदेवो वसु ७०० र्वसुमना हविः ॥ ७४ ॥

स्तुति के योग्य होने से स्तव्य हैं। स्तुति आपको प्यारी है, इससे स्तवप्रिय हैं। जिस स्तुति से स्तुति के योग्य हो, वह भी आप ही हो, इससे स्तोत्र हैं। स्तुति रूप होने से स्तुति हैं। स्तुति करने वाले भी आप हो हो, इस कारण स्तोता हैं। पंच आयुधों से प्राणियों को बचाते हैं इससे रणप्रिय हैं। सब काम और शक्तियों से युक्त होने से पूर्ण हैं। कामनाओं के पूर्ण करने वाले हो, इससे पूरयिता हैं (६९०)। पाप नाशक होने से आप पुण्य हैं। पवित्र कीर्ति होने से पुण्यकीर्ति हैं। और भीतर की शक्ति से रहित हो, इस कारण अनामय हैं ॥७३॥ मन के सदृश वेगवान होने से मणोजीव हैं। वेदादि विद्या तीर्थरूप बनाने से तीर्थकर हैं। सुवण वीर्य होने से वसुरेता हैं। धन के देने वाले हैं, इससे वसुप्रद हैं। मोक्षदायक होने से वसुप्रद हैं। वसुदेव के पुत्र होने से वासुदेव हैं। चराचर

आप में हैं, इस कारण वसु हैं (७००)। सब में आपका मन बसता है, इससे वसुमना हैं। यज्ञ में हवि-रूप हैं, इस कारण हवि हैं ॥७४॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्यपरायणः। शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः ७१० सुयामुनः ॥ ७५ ॥ भूतवासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः। दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥ ७६ ॥

महात्माओं को मोक्ष देने से सद्गति हैं। जगत की रक्षा करने से सत्कृति हैं। भेद शून्य होने से सत्ता हैं। सब रूपों में रहने से सद्गति हैं। उत्कृष्ट अयन होने से सत्यपरायण हैं। शूरवीरों की सेना से युक्त होने से शूरसेन हैं। यदुकुल में श्रेष्ठ होने से यदु श्रेष्ठ हैं। विद्वान के आश्रय हैं, इससे सन्निवास हैं (७१०)। यमुना के तीर पर बिहार करने से सुयामुन हैं ॥७५॥ सब प्राणियों का निवास होने से भूतवास हैं। सब जगत को आपने अपनी माया से ढक रक्खा है, इससे वासुदेव हैं। आप में समस्त जीवात्माओं की प्राणशक्ति और अपार सम्पत्ति है, इससे सर्वासुनिलयोनल हैं। घमण्ड को दूर करने से दर्पहा हैं। अधर्मियों के दर्प को नाश करने से दर्पद हैं। स्वात्मामृत रस को आस्वादन करने से दृप्त हैं। कठिनता से हृदय में ध्यान किये जायें, इससे दुर्धर हैं। कोई आपको पराजित नहीं कर सकता, इससे आप अपराजित हैं ॥७६॥

विश्वमूर्ति ७२० महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान। अनेकमूर्तिरव्यक्तः शत-

मूर्तिः शताननः ॥ ७७ ॥ एको नैकः सर्वः ७३० कः किम्यत्तत्पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥ ७८ ॥

सर्वात्मक होने से विश्वमूर्ति हैं (७२०)। विशाल मूर्ति हैं, इससे महामूर्ति हैं। तेजोमय होने से दीप्तमूर्ति हैं। सर्व व्यापक होने से अमूर्तिमान हैं। अवतार धारण करने से अनेक मूर्ति हैं। अनेक रूप होने से अव्यक्त हैं। सैकड़ों मूर्ति रखने से शतमूर्ति हैं। अनन्त मुख होने से शतानन हैं ॥७७॥ अमर होने से एक हैं। अनेक होने से नैक है। सोम रूप होने से सदः हैं (७३०)। सुख रूप होने से एक कः हैं। सर्व पुरुषार्थ रूप होने से किम् हैं। स्वतः सिद्ध होने से यत हैं। ज्ञान को बढ़ाने से तन हैं। सर्वश्रेष्ठ स्थान होने से पदमनुत्तमम् हैं। सबके बन्ध होने से लोकबन्धु हैं। सबके नाथ हैं, इससे लोकनाथ हैं। लक्ष्मीपति होने से माधव हैं। भक्तों पर स्नेह करने से भक्तवत्सल हैं ॥७८॥

सुवर्णवर्णो ७४० हेमांगो वरांगश्चन्दनांगदी । वीरहा विषमःशून्योऽघृता-
शीरचलश्चलः ॥ ७९ ॥ अमानी ७५० मानदो मान्योलोकस्वामी त्रिलोकधृक ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधाधराधरः ॥ ८० ।

सुवर्णरूप होने से सुवर्णवर्ण हैं (७४०)। सुवर्ण सा अंग होने से हेमाँग हैं। श्रेष्ठ अंग होने से वरांग हैं, चंदन के भूषण होने से चंदनांगदी हैं। धर्म के हेतु असुरों को मारने से वीरहा हैं। विलक्षण होने से विषम हैं। दोषरहित होने से शन्य हैं। स्वयं सिद्ध होने से अघृताषी हैं। सदा एक रस होने

से अचल हैं। पावनरूप होने से चल हैं ॥७९॥ अभिमान न होने से अमानी हैं(७५०)गर्वहारी होने से मानद हैं। पूजनीय होने से मान्य हैं। त्रिलोकी के रक्षक होने से लोकस्वामी हैं। त्रिलोकी के आधार होने से त्रिलोकीधृक हैं। सुन्दरबुद्धि होने से सुमेधा हैं। यज्ञ में प्रकट होने से मेधज हैं। कृतार्थ होने से सत्यमेधा हैं। शेषरूप से पृथ्वी धारण करने के कारण धराधर हैं ॥८०॥

तेजावृषो ७६० द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतांवरः। प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकश्रृंगो गदाग्रजः ॥ ८१ ॥ चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूह ७७० श्चतुर्गतिः। चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥ ८२ ॥

आदित्यरूप होने से तेजोवृष हैं(७६०) तेजपुत्र होने से द्युतिधर हैं। शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ होने से शस्त्रभृतांवर हैं। भक्तों की पूजाग्रहण करने से प्रग्रह हैं। सबका निग्रह करने से निग्रह हैं। मनवांछित फल देने से व्यग्र हैं। अनेक श्रृंग होने से नैकश्रृंग हैं। बलदेव रूप होने से गदाग्रज हैं ॥८१॥ चारमूर्ति होने से चतुर्मूर्ति हैं। चार भुजा धारण करने से चतुर्बाहु हैं। चाररूप होने से चतुर्व्यूह हैं (७७०)। चारों वेदों की गति होने से चतुर्गति हैं। चतुर होने से चतुरात्मा हैं। चारों भाव होने से चतुर्भाव हैं। चारों वेदों के जानने से चतुर्वेदवित् हैं। एक पद होने से एकपात हैं ॥८२॥

समावर्ता निवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः। दुर्लभो ७८० दुर्गमो दुर्गो दुरा-

वासो दुरारिहा ॥ ८३ ॥ शुभांगो लोकसारंगः सुतंतुस्तंतुवर्धनः । इन्द्रकर्मा महाकर्मा ७९० कृतकर्मा कृतागमः ॥ ८४ ॥

संसार चलाने वाले हैं, इससे समावर्त हैं । सबसे पृथक होने से निवृत्तात्मा हैं । अजेय होने से दुर्जय हैं । सब आपके वश में हैं इससे दुरतिक्रम हैं । कठिनाई से प्राप्त होने से दुर्लभ हैं(७८०)। कठिनाई से जानने से दुर्गम हैं, हृदयरूप दुर्ग में निवास करने से दुर्ग हैं । समाधि द्वारा कठिनता से प्राप्त होते हैं इससे दुरावास हैं । दुष्टों के मारने से दुरारिहा हैं ॥८३॥ सुन्दर अंग होने से शुभांग हैं । प्रणवरूप होने से लोक सारंग हैं । लोक रचना के कारण सुतन्तु हैं । संसार को बढ़ाने से तन्तुवर्द्धन हैं । बड़े कार्य के करने से इन्द्रकर्मा हैं । महान कर्म करने से महाकर्मा हैं (७९०) । कर्म कर चुके इससे कृतकर्मा हैं । वेद आपने किया इससे कृतागम हैं ॥८४॥

उद्भवःसुन्दरः सुन्दरोरत्ननाभः सुलोचनः । अर्कोवाजसनः श्रृंगी ८०० जयन्तः सर्वविज्जयी ॥ ८५ ॥ सुवर्णविन्दुरक्षोभ्यःसर्ववागीश्वरेश्वरः । महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधि ८१० ॥ ८६ ॥

उत्कृष्ट जन्म धारण करने से उद्भव हैं । सौभाग्यशाली होने से सुन्दर हैं । कृपालु होने से सुन्दर हैं । रत्न सी सुन्दर नाभि होने से रत्ननाभ हैं । सुन्दर नयन होने से सुलोचन हैं । ब्रह्मादिकों से पूजित होने से अर्क हैं । अन्न देने से वाजसन हैं । मत्स्यरूप धारण करने से श्रृंगी हैं (८००) ।

दुष्टों को जीतने से जय हैं। ज्ञानवान् होने से सर्वंवित् हैं। असुरों को जीतने से जयी हैं ॥८५॥ सुन्दर अंग होने से सुवर्ण बिन्दु हैं। खेद न होने से अक्षोभ्य हैं। ब्रह्मादिकों के भी ईश्वर हैं इससे सर्ववागीश्वर हैं। तीर्थरूप होने से महाह्रद हैं। मायापति होने से महागर्त हैं। महान होने से महाभूत हैं। महान निधि होने से महानिधि हैं (८१०) ॥८६॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पवनोऽनिलः। अमृतांशोऽमृतः वपु सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ८२० ॥ ८७ ॥ सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रु जिच्छत्रुतापनः। न्यग्रोधोदुम्बरोश्वत्थश्चाणूरांध्रनिषूदनः ॥ ८८ ॥

पृथ्वी का बोझ उतारने से कुमुद हैं। कुन्द के समान होने से कुन्दर हैं। स्वच्छ अंग होने से कुन्द हैं। इन्द्रवत् को दूर करने के कारण पर्जन्य हैं। वायुरूप होने से पवन हैं। प्रेरणा करने से अनिल हैं। अमृत को पान करने से अमृतांश हैं। मरणरहित शरीर धारण करने से अमृतवपु हैं। सबको जानने से सर्वज्ञ हैं। सर्वमुखी होने से सर्वतोमुख हैं (८२०)॥८७॥ भक्ति द्वारा सुलभ होने से सुलभ हैं। सुन्दर विचार होने से सुव्रत हैं। स्वतन्त्र होने से सिद्ध हैं। शत्रुओं को जीतने से शत्रुजित हैं। शत्रुओं को तपाने से शत्रुतापन हैं। आपकी माया का विस्तार होने से आप न्यग्रोध हैं। अन्नादिक से सबका पोषण करते हैं इससे उदुम्बर हैं। अनादि होने से अश्वत्थ हैं। आन्ध्रदेश के चाणूर को मारने से चाणरान्ध्र निषूदन हैं ॥८८॥

सहस्रार्चिः ८३० सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः। अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः॥ ८९ ॥ अणुर्बृहत् ८४० कृशःस्थूलो गुणभृन्निर्गुणोमहान्। अधृतःस्वधृतःस्वास्यःप्राग्वंशोवंशवर्द्धनः ८५० ॥ ९० ॥

हजारों आपकी सूर्यरूप किरण हैं इससे सहस्रार्चि हैं (८३०)। काली, करालि, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी, विश्वरुचि आपकी सात जिह्वा हैं इससे सप्तजिह्व हैं। सात समिधा वाले होने से सप्तैधा हैं। सप्ति नामक घोड़ा या अग्निरूप सात वाहन हैं इससे सप्तवाहन हैं। निराकार होने से अमूर्ति हैं। पाप रहित हो इससे अनघ हैं। आपको कोई नहीं जान सकता इससे अचिन्त्य हैं। अधर्मियों को भय देने वाले हैं इससे भयकृत हैं। भक्तों के भय को नाश करते हैं इससे भयनाशन हैं ॥८९॥ सूक्ष्म रूप होने से अणु हैं। ब्रह्मांड में व्याप्त होने से वृहत हैं (८४०)। बहुत हल्के होने से कृश हैं। सबकी आतमा होने से स्तूल हैं। सत्व, रज, तम गुणों के धारण करने से गुणभृत हैं। गुण रहित होने से आप निर्गुण हैं। सर्वपूज्य होने से महान हैं। आप निराधार हैं। इससे अधृत हैं। आप ही आतमा को धारण करते हैं इससे स्वधृत हैं। सुन्दर मुख अथवा वेद मुख से निकला इससे स्वास्य हैं। ब्रह्मादि आपसे उत्पन्न हुए इससे प्राग्वंश हैं। वंश को बढ़ाने से आप वंश वर्द्धन हैं (८५०) ॥९०॥

भारभृत् कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः। आश्रमः श्रमणः क्षामः

धनुर्धरो धनुर्वेदो दंडो दमयिता दमः ।
सुपर्णो वायुवाहनः ८६० ॥ ९१ ॥
अपराजितः सर्वसहो नियंताऽनियमोऽयमः ८७० ॥ ९२ ॥

सब वेदों ने आपकी महिमा गाई है इससे कथित हैं। योग में अपनी आत्मा धारण करते हैं इससे योगी हैं। योगियों के ईश है इससे योगीश हैं। सम्पूर्ण कामाओं को देने वाले हैं। इससे सर्वकामद हैं। सबके आश्रयरूप होने से आप आश्रम हैं। अविवेकियों को संतप्त करते हैं इससे आप श्रमण हैं। सब प्रजा को क्षीण करते हो इस कारण क्षाम हैं। संसार रूप वृक्ष के आप सुन्दर वेद रूप पत्र हैं। 'छंदांसि यस्य पर्णानि इस कारण आप सुपर्ण हैं। आपके भय से वायु चलती है इससे वायुवाहन हैं (८६०) ॥९१॥ रामरूप में धनुषवाण धारण किया इससे धनुर्धर हैं। धनुर्वेद को जानते हैं, इससे धनुर्वेद हैं। दुष्टों को दण्ड रूप हैं इससे दण्ड हैं। दुष्ट प्रजा का दमन करते हैं इससे दमयिता हैं। दण्ड कार्य रूप फल आप हैं इससे दम हैं। शत्रु आपको पराजित नहीं कर सकते और इससे अपराजित हैं। सब शत्रुओं को सहते हैं इससे सर्वसह हैं। अपने-२ कर्म में सबको लगाने से नियन्ता हैं। आपका कोई नियन्ता नहीं इससे अनियम हैं। आप सबको नियम पूर्वक चलाते हैं और मृत्यु रहित होने से आप यम हैं (८७०) ॥९२॥

सत्त्ववान् सात्त्विकःसत्यः सत्यधर्मपरायणः । अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः

ज्योतिःसुरुचिर्हुतभुग्विभुः । रवि-

प्रियकृत्प्रीतिवर्द्धनः ॥६३॥ विहायसगति ८८० ज्योतिःसुरुचिर्हुतभुग्विभुः । रवि-

र्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥ ६४ ॥

सत्वगुण में स्थित होने से सात्विक हैं। शौर्यादि सत्व आपमें विद्यमान हैं, इससे सत्यवान हैं। सत्वगुण में स्थित होने से सात्विक हैं। वेदविहित सत्य धर्म में चलने से सत्य धर्मपरायण हैं, पुरु-श्रेष्ठ कामों को साधन करने से सत्य हैं। वेदविहित सत्य धर्म में चलने से सत्य धर्मपरायण हैं, पुरु-षार्थ चाहने वाले को चाहते हैं या प्रलय में जगत आपमें प्रविष्ट हो जाता है इससे अभिप्राय हैं। उत्तम वस्तुओं के योग्य होने से प्रियार्ह हैं प्रजा के योग्य हैं, इससे अर्ह हैं, पूजन करने वालों के प्रिय करने वाले हैं इससे प्रियकृत हैं। पूजकों की प्रीति को बढ़ाते हैं इससे प्रीतिवर्द्धन हैं ॥६३॥ सूर्यरूप से आकाश में चलते हैं इससे विहायसगति हैं (८८०)। स्वयं प्रकाशित हैं इससे आप ज्योति हैं। शोभा-यमान कांति होने से सुरुचि हैं। यज्ञ को हवि को अग्नि रूप से खाते हैं, इससे हुतभुक् हैं। सब जगह वर्तमान हैं इससे विभु हैं। रसों को खींचते हो इससे रवि हैं। सूर्यरूप से सदा प्रकाशित हो, इससे विरोचन हैं। लक्ष्मी के देने वाले हैं इस कारण सूर्य हैं। सब जगत के पैदा करने वाले हैं इस कारण सविता हैं। सूर्य आपके नेत्र हैं इससे रविलोचन हैं ॥६४॥

अनंतो ८९० हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः । अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥ ६५ ॥ सनात् ९०० सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः । स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणः ॥ ९६ ॥

नित्य शुद्धरूप होने से अनन्त हैं (८९०)। हवन किये हुए पदार्थों को खा लेते हैं इससे हुतभुत हैं। अचेतन प्रकृति को भोग लगाने से भोक्ता हैं, भक्तों को मोक्षरूप सुख देने से सुखद हैं। धर्म-रक्षार्थ अनेक जन्म धारण किये इससे नैकज हैं। श्रुति कहती है सबसे पहले पैदा हुये इस कारण अग्रज हैं। सब कामों में परिपूर्ण होने से अनिर्विण्ण हैं। साधुओं के अपराधों को सदा क्षमा करते हैं, इससे सदामर्षी हैं। सब लोकों के आधार हो इससे लोकाधिष्ठान हैं। आपका रूप अद्‌भुत होने से अद्‌भुत हैं ॥९५॥ सदा एक रस होने से सनात् हैं (९००)। ब्रह्मादिकों से भी सनातन हैं इससे सनातनतम हैं। बडवानल के समान रूप होने से कपिल हैं। किरणों से जल पीते हैं इससे कपि हैं। प्रलय में भी विकार को प्राप्त नहीं होते इससे अव्यय हैं। भ तों को मंगल देने से स्वस्तिद है। कल्याण करते हैं इससे स्वस्तिकृत हैं, मंगल स्वरूप होने से स्वस्ति हैं। मंगलानन्दरूप को भोगते हैं, इससे स्वस्तिभुक् हैं। मंगलरूप धर्म को बढ़ाने से स्वस्तिदक्षिण हैं ॥९६॥

अरौद्रः ९१० कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्ज्जित शासनः। शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥ ९७ ॥ अक्रूरः पेशलो ९२० दक्षो दक्षिणः क्षमिणांवरः। विद्वत्तमोवीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ ९८ ॥

पूर्णकाम एवं रागद्वेषादि से रहित होने से अरौद्र हैं (९१०)। शेषरूप करने से, कुण्डली हैं लोक रक्षार्थं चक्र धारण करने से चक्री हैं। वामन रूप धारी अथवा अनन्त वीर्य होने से विक्रमी है। श्रुति, स्मृति रूप आज्ञा के धारण करने से ऊर्जितशासन हैं। शब्द से आपकी प्रशंसा नहीं हो सकती इससे

शब्दातिग हैं। वेद आपकी प्रशंसा करते हैं इससे शब्दसह हैं। तापत्रय से दग्ध जीवों के आश्रय होने से शिशिर हैं संसारियों को आत्मज्ञान रूपी निशा और ज्ञानियों को संसाररूपी निशा करते हैं, इससे सर्वरीकर हैं ॥९७॥ सब सामग्रियों के उपस्थित होने से अक्रूर हैं। कर्म, मन, वाणी से शरीर को शोभायमान हैं इससे पेशल हैं (९२०)। चतुर होने से दक्ष हैं। चतुरों में भी चतुर होने से दक्षिण हैं। क्षमावान योगी और पृथिव्यादिकों में भी श्रेष्ठ हैं इससे क्षमिणांवर हैं। सर्वदा सर्वगोचर होने से विद्वत्तम हैं। सांसारिक भय न होने से वीतभय हैं। आपके चरित्र सुनने और नाम कीर्तन करने से पुण्य होता है, इससे पुण्य श्रवण कीर्तन हैं ॥९८॥

उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ९३० । वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ९९ ॥ अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः । चतुरस्रो ९४० गंभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥ १०० ॥

संसार समुद्र से पार लगाते हैं। इससे उत्तारण हैं पापों का नाश करते हैं इससे दुष्कृतिहा हैं। स्मरण करने वाले को पुण्य करते हैं इससे पुण्य हैं। बुरे स्वप्न का नाश करने से दुःस्वप्न नाशन हैं (९३०)। संसारियों को मुक्ति देकर उनके बल को हरते हैं इससे वीरहा हैं। सत्वगुण में स्थित होकर रक्षा करते हैं, इससे रक्षण हैं। सन्मार्गवती सन्त रूप से विद्याविनय वृद्धि करते हैं इससे सन्त हैं। प्राण रूप से सब प्रजा को जिवाते हैं इससे जीवन हैं। चारों ओर से विश्व में व्यापक होकर स्थित हैं इससे पर्यवस्थित हैं ॥९९॥ अनन्त रूप से विश्व के चारों ओर स्थित हैं, इससे अनन्तरूप

हैं। अपरिमित शक्ति होने से अनन्तश्री हैं। क्रोध को जीतने से जितमन्यु हैं। संसार का भय नाश करने वाले हैं इससे भयापह हैं। अर्थ धर्म काम मोक्ष को देते हैं इससे चतुरस्र हैं (९४०)। ब्रह्मा भी आपके गम्भीर आशय को नहीं जान सके इससे गम्भीरात्मा हैं अधिकारियों को विविध फल देने से विदिश हैं। इन्द्रादिकों को तरह तरह की आज्ञा देने से व्यादिश हैं। वेद रूप से समस्त कर्म फल देने से दिश हैं ॥१००॥

अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिरांगदः। जननी ९५० जनजन्मादि-
र्भीमो भीमपराक्रमः॥ १०१ ॥ आधारनिलयोधाता पुष्पहासः प्रजागरः। उर्ध्वगः
सत्पथाचारःप्राणदः ९६० प्रणवः पणः ॥ १०२ ॥

आदि कारण रहित हैं, इससे अनादि हैं। भूमि के आधार और त्रिलोकी में व्यापक होने से भूर्भुः हैं। त्रिलोकी की सम्पत्ति होने से लक्ष्मी हैं। अच्छी है गति और आज्ञा इससे सुवीर हैं। सुन्दर बाजूबन्द धारण करने से रुचिराँगद हैं। नाना प्रकार के जन्तुओं को पैदा करने से जनन हैं (९५०) मनुष्य के जन्म के आदिकारण होने से जनजन्मादि हैं। दुष्टों को भय के हेतु होने से भीम हैं। राक्षसों को भयकारी पराक्रम होने से भीम पराक्रम हैं ॥१०१॥ पंच भूतों के आधार होने से आधारनिलय हैं। निराधार होने से अधाता हैं। पुष्पवत् संसार को प्रफुल्लित रखते हैं इससे पुष्पहास हैं। सदा जाग्रत अवस्था होने से प्रजागर हैं। सबसे ऊपर स्थित हैं, इससे उर्ध्वग हैं। सत्यपुरुष के मार्ग में

चलते हैं, इससे सत्पथाचार हैं। मरे हुओं को प्राण देने से प्राणद हैं (९६०)। ओंकार रूप होने से प्रणव हैं। यथायोग्य व्यवहार करने से पण हैं ॥१०२॥

प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः तत्त्वं। तत्त्वविदेकात्मा जन्म-मृत्युजरातिगः ९७० ॥ १०३ ॥ भूर्भुवः स्वस्तरुस्तारः सपिता प्रपितामहः। यज्ञोयज्ञपतिर्यज्वा यज्ञांगो यज्ञवाहनः ॥ १०४ ॥

वेदरूप प्रमाण होने से प्रमाण हैं। इन्द्रियां आपमें लीन हैं इससे प्राण निलय हैं। प्राणों का आप पोषण करते हैं इससे प्राणभृत हैं। प्राणियों को प्राणरूप पवन से जिवाते हैं, इससे प्राणजीवन हैं। ब्रह्मरूप होने से तत्व हैं। अपने रूप को जानने से तत्ववित हैं। एक आत्मारूप होने से एकात्म हैं। जन्म मृत्यु और बुढ़ापे से दूर हैं इससे जन्म-मृत्यु जरातिग हैं (९७०) ॥१०३॥ प्राणियों को तारते हैं, इससे भूर्भव स्वस्तरु हैं। नाम संकीर्तन से संसार को तारते हैं, इससे तार हैं। सबके पिता हैं इससे सपिता हैं। ब्रह्मा के भी पिता होने से प्रपितामह हैं। यज्ञरूप होने से यज्ञ हैं। यज्ञों के रक्षक होने से यज्ञपति हैं। यजमान रूप होने से यज्वा हैं। यज्ञ आपका अंग है इससे यज्ञांग हैं। फल हेतु यज्ञों के कराने वाले ही हैं, इससे यज्ञ वाहन हैं ॥१०४॥

यज्ञभृद् ९८० यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः। यज्ञांतकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥ १०५ ॥ आत्मयोनिः स्वयं जातो ९९० वैखानः सामगायनः। देवकी

नन्दनः स्त्रष्टाक्षितीश पापनाशनः ॥ १०६ ॥

यज्ञों की रक्षा करने से यज्ञभृत हैं (६८०)। यज्ञ करने वाले हैं इससे यज्ञकृत है। यज्ञ करने वालों की रक्षा करने से यज्ञी हैं। यज्ञ के भोक्ता हैं इससे यज्ञभुक् हैं। यज्ञ के साधन प्राप्त करने से यज्ञसाधन हैं। यज्ञ के समाप्त करने वाले हैं, इससे यज्ञान्तकृत हैं। ज्ञानरूपी यज्ञ करने से यज्ञगुह्य हैं। सब जीव अन्न के भोग करने से जीते हैं इससे अन्न हैं। आप अन्न को खाते हैं, इससे अन्नाद हैं। ॥१०५॥ आप अपने आप प्रकट हुये, इससे आत्मयोनि हैं। प्रकृति रूप जन्म लेते हैं, इससे स्वयं हैं (६६०) पृथ्वी खोदकर हिरण्याक्ष को मारने से वैखान हैं। सामवेद आपके मुख से निकला, इससे सामगायन हैं। देवकी के पुत्र होने से देवकी नन्दन हैं। सब लोकों के कर्ता हैं, इससे स्त्रष्टा हैं। पृथ्वी के राजा होने से आप क्षितीश हैं। नाम स्मरण ध्यान से पापों का नाश करने से आप पापनाशन हैं॥१०६॥

शंखभृन्नंदकी चक्री शाङ्र्गधन्वा १००० गदाधराः। रथांगपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः १००४ ॥१०७॥

॥ सर्वप्रहरणायुधः ओ३म नमः इति ॥

आप अहंकारात्मक पाञ्चजन्य शंख धारण करते हैं, इससे शंखभृत हैं। विद्यामय नन्दक नामक खड्ग के धारण करने से नन्दकी हैं। मनस्तत्वात्मक सुदर्शन चक्र के धारण करने से चक्री हैं। इन्द्रियादि अहंकारात्मक धनुषधारण करने से शाङ्गंधन्वा हैं (१०००)। बुद्धितत्वात्मक कौमोद की

गदा धारण करने से आप गदाधर हैं, रथांग अर्थात् चक्र धारण करने से रणांगपाणि हैं। कहीं से चलायमान नहीं होते एतएव अक्षोभ्य हैं, और सब आयुधों को धारण करते हैं, इससे सर्व प्रहरणायुध हैं (१००४) ॥१०७॥

अब आयुध धारण करने वाले आप महापुरुष को बारम्बार नमस्कार है।

ऊपर हजार नामों की रुप्राप्ति दिखलाने के लिये अन्त के नाम को दुबारा लिखा गया है। ओंकार का मंगल वाची होने से स्मरण किया गया है तथा अन्त में भगवान को नमस्कार किया गया है।

—:o:—

॥ अथ विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र का फल ॥

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्यमहात्मनः। नाम्नांसहस्त्रं दिव्यानायशेषेण प्रकीर्तितम् ॥१०८॥ य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत्। नाशुभं प्राप्नुयात्किंचित्सोमुत्रेह च मानवः ॥१०९॥

इस प्रकार कीर्तन करने के योग्य जो महात्मा केशव भगवान ने दिव्य सहस्रनाम पूर्ण रीति से वर्णन किये हैं ॥१०८॥ जो मनुष्य इसका नित्य श्रवण करें अथवा पाठ करें वह इस लोक और परलोक दोनों में शुभ फल प्राप्त करें ॥१०९॥

सुखक्षान्तिः श्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥११९॥

वासुदेव के भक्तों को कभी किसी से भय नहीं उत्पन्न होता है और जन्म मृत्यु रोग बुढ़ापे का भय कभी नहीं होता ॥११८॥ जो श्रद्धाभक्ति पूर्वक इन स्तोत्र का पाठ करे उसको आत्म सुख, शांति, लक्ष्मी, धैर्य, स्मृति और कीर्ति मिले ॥११९॥

न क्रोधो न च मात्सर्य्यं न लोभोनाऽशुभामतिः । भवंतिकृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥१२०॥ द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशोभूर्महोदधिः । वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥ १२१ ॥ ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोर-गराक्षसम् । जगद्वशे वर्त्ततेऽदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥१२२॥

वे सुकृती जीव जो पुरुषोत्तम भगवान में भक्ति करते हैं, उनको क्रोध, मत्सरता, लोभ, बुरी बुद्धि नहीं होती है ॥१२०॥ स्वर्ग, चन्द्रमा, सूर्य, तारागण, आकाश, दिशा, समुद्र ये सब महात्मा वासुदेव के पराक्रम से स्थित हैं ॥१२१॥ देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष-सांप, राक्षस, और स्थावर जंगम भगवान् श्रीकृष्ण के आधीन हैं ॥१२२॥

इन्द्रियाणि मनोबुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः । वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं

क्षेत्रज्ञ एव च ॥ १२३ ॥ सर्वागमनामाचारः प्रथमं परिकल्पते । आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥ १२४ ॥

अर्थ—इन्द्रियां, मन, बुद्धि, सत्व, तेज, बल, धीरज क्षेत्र (देह) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा) यह सब वासुदेव के रूप हैं ॥१२३॥ सब शास्त्रों में आचार को प्रथम कहा है तथा आचार से धर्म की उत्पत्ति है। तथा धर्म के स्वामी भगवान् अच्युत हैं ॥१२४॥

ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः। जंगमाजंगं चेदं जगन्नारायणोभवम् ॥ १२५ ॥ योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादिकर्मच। वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥ १२६ ॥

अर्थ—ऋषि, पितर, देवता, महाभूत, धातु और समस्त स्थावर जंगम जगत ये सब नारायण से उत्पन्न हैं ॥१२५॥ योग, ज्ञान, सांख्य शिल्पादि कर्म, वेद, शास्त्र और विज्ञान ये सब जनार्दन भगवान से उत्पन्न हैं ॥१२६॥

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः। त्रींल्लोकान्व्याप्य भूतात्मा

भुङ्क्ते विश्वभूगव्ययः । १२७ । इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् । पठेद्य इच्छेत्पुरुषः प्राप्तुं सुखानि च । १२८ ।

अर्थ—विश्व भोक्ता तथा अविनाशी विष्णु तक ऐसे ही हैं जो अनेक भूतों के रूपों को धारण करके तीनों लोकों में व्याप्त होकर भोग रहे हैं ॥१२७॥ जो पुरुष कल्याण तथा सुख चाहता है वह इस भगवान व्यासजी के कहे हुये विष्णु सहस्रनाम का पाठ करे ॥१२८॥

विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाव्ययम् । भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यांति पराभवम् । १२९ । अर्जुन उवाच । पद्मपत्रविशालाक्ष पद्मनाभ सुरोत्तम । भक्तानामनुरक्तानां त्रांता भव जनार्दन ।१३०।

अर्थ—जो विश्व के ईश्वर, अज देव जगत की उत्पत्ति स्थिति और नाश के कारण, कमल नेत्र भगवान का भजन करते हैं वे पराभव नहीं पाते ॥१२९॥ अर्जुन बोले—हे कमल पत्र के सदृश विशाल नेत्रों वाले, हे नाभि में कमल दल धारण करने वाले, हे देवोत्तम जनार्दन भगवान ! आप सदैव अपने परम-भक्तों की रक्षा करने वाले होवें, ॥१३०॥

श्रीभगवानुवाच—यो मां नामसहस्रेण स्तोतुमिच्छसि पाण्डव । सोऽहमेकेन

श्लोकेनस्तुत एव न संशयः। १३१। नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे। सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटियुगधारिणे नमः १३२ नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने। नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तुते। १३३।

श्री भगवान बोले—हे पाण्डु पुत्र अर्जुन! जो भक्त मुझे मेरे हजार नाम (मन्त्रों) द्वारा प्रसन्न करना चाहे, वही मैं निज-भक्तों द्वारा भावनापूर्वक कहे गये एक श्लोक से भी प्रसन्न हो जाता हूं, इसमें सन्देह नहीं ॥१३१॥ हे अनन्त विग्रह वाले, सहस्र रूप धारण करने वाले, हजारों चरण, नेत्र, शिर एवं बाहु आदि धारण करने वाले, विराट रूप भगवान! आप प्रत्येक युगों में निज भक्तों के कल्याणार्थ अनेकानेक रूप धारण करते रहते हैं, आपको नमस्कार हो ॥१३२॥ हे नाभि कमल वाले, क्षीर सागर में शयन करने वाले, अनन्त विग्रह वाले, चतुर्भुज धारण करने वाले, वासुदेव भगवान! आपको बारम्बार नमस्कार होवे ॥१३३॥

वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयं। सर्वभूतनिवासोऽसिवासुदेव नमोस्तुते। १३४। नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च। जगद्धिताय कृष्णाय

गोविन्दाय नमो नमः । १३५ । आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् । सर्वदेवनमस्कारः केशवंप्रति गच्छति । १३६ ।

जिसकी असीम कृपा से ही ये समस्त त्रिभुवन स्थिर बना है, ऐसे समस्त प्राणियों के निवास रूप श्रीहरि वासुदेवजी को हमारा बारम्बार नमस्कार होवे ॥१३४॥ हे ब्रह्मण्यदेव ! हे गौ तथा ब्राह्मणों के हित करने वाले, हे विश्व के कल्याण स्वरूप, हे गोविन्द, हे कृष्ण, आपको नमस्कार हो ॥१३५॥ जिस प्रकार आकाश से पृथ्वी पर गिरा हुआ जल बहता हुआ सीधा समुद्र में जा गिरता है, उसी प्रकार अन्यान्य देवताओं द्वारा की गई स्तुति भगवान केशव को ही प्राप्त होती है ॥१३६॥

एष निष्कंटकः पंथा यत्र सम्पूज्यते हरिः । कुपथं तं विजानीयात्गोविंदरहितागमम् । १३७ । सर्ववेदेषु यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत्फलं । तत्फलं समवाप्नोति स्तुत्वा देवंजनार्दनम । १३८ । योनरःपठते नित्यं त्रिकालंकेशवालये । द्विकालमेककालं वा क्रूरं सर्वं व्यपोहति । १३९ ।

संसार में श्रीहरि भगवान की पूजा करना ही एक निष्टकण्टक मार्ग है, जहां गोविन्द भगवान की पूजा नहीं होती, उसे कुमार्ग जानना चाहिये ॥१३७॥ समस्त वेदों के पाठ का जो पुण्य फल हैं

तथा तीर्थों की यात्रा का जो उत्तम फल है वह सभी फल श्रीविष्णु भगवान की स्तुति करने से मनुष्य सहज में ही प्राप्त कर लेता है ।।१३८।। जो मनुष्य नित्य श्रीविष्णु भगवान के मन्दिर में "विष्णु-सहस्रनाम" का पाठ करता है (चाहे त्रिकाल, द्विकाल अथवा एक काल ही पाठ करता है) वह समस्त आपत्तियों से मुक्त हो जाता है ।।१३९।।

दह्यंते रिपवस्तस्य सौम्याः सर्वे सदाग्रहाः । विलीयन्ते च पापानि स्तवे ह्यस्मिन प्रकीर्तिते । १४० । येन ध्यातः श्रुतो येन येनायं पठितः स्तवः । दत्तानि सर्वदानानि सुराःसर्वे समर्चिताः । १४१ ।

उसके शत्रु भस्म हो जाते हैं तथा क्रूर ग्रह शान्त बने रहते हैं । एवं उसके समस्त पाप "श्री विष्णु सहस्रनाम के पाठ मात्र से" नष्ट हो जाते हैं ।।१४०।। जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करता है या केवल सुनता ही है वह समस्त दानों के फल को तथा सर्वदेव पूजा के फल को सहज ही पा लेता है।।१४१।।

इह लोके परे वापिन भयं विद्यते क्वचित । नाम्नाँ सहस्रं योऽधीते द्वादश्यां मम सन्निधौ । १४२ । स निर्दहति पापानि कल्पकोटिशतानि च । अश्वत्थसन्निधौ पार्थ तुलसीसन्निधौ तथा । १४३ ।

—:०:—

उसे इस लोक में तथा परलोक में किसी प्रकार का भी भय नहीं रहता। हे अर्जुन ! जो मनुष्य मन्दिर में मेरे निकट द्वादशी तिथि को इस स्तोत्र का पाठ करता है ॥१४२॥ वह करोड़ों जन्मों के पापों को भस्म कर देता है। पीपल के वृक्ष के नीचे अथवा तुलसी के वृक्ष के निकट इस स्तोत्र का पाठ करे ॥१४३॥

पठेन्नाम सहस्त्रं तु गवां कोटिफलं लभेत् ॥ शिवालये पठेन्नित्यं तुलसी-वनसंस्थितः ॥ १४४ ॥ नरोमुक्तिमवाप्नोति चक्रपाणेर्वचो यथा। ब्रह्महत्यादिकं घोरं सर्वपापं विनश्यति ॥ १४५ ॥

जो मनुष्य इन सहस्रनामों का सप्रेम पाठ करता है, वह करोड़ों गौ-दान के पुण्य फल को प्राप्त कर लेता है। अथवा जो मनुष्य शिवालय या तुलसी वन में स्थिर होकर निरन्तर पाठ करता है ॥१४४॥ वह मनुष्य साँसारिक आवागमन से मुक्त होकर सद्गति प्राप्त करता है, एवं ब्रह्म-हत्या आदि घोर पाप से मुक्त हो जाता है, ऐसा श्रीविष्णु भगवान का वचन है ॥१४५॥

॥ इति विष्णु सहस्त्रनाम स्तोत्र सम्पूर्णम् ॥

—००—

❀ अथ श्रीनारायण कवचम् ❀

राजोवाच ॥ यया गुप्तः सहस्राक्षः सवाहान् रिपुसैनिकान्। क्रीडन्निव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजेश्रियम् ॥ १ ॥ भगवंस्तन्ममाख्याहि वर्म नारायणात्मकम। यथाऽऽततायिनः शत्रून् येन गुप्तोऽजयन्मृधे ॥ २। श्रीशुक उवाच ॥ वृतः पुरोहितस्त्वाष्ट्रो महेन्द्रायानुपृच्छते। नारायणाख्यं वर्माह तदिहैकमनाः शृणु ॥ ३ ॥ विश्वरूप उवाच ॥ धौताङ्‌घ्रिपाणिराचम्य सपवित्र उदङ्मुखः। कृतस्वांगकरन्यासो मन्त्राभ्यां वाग्यतः शुचि ॥ ४ ॥ नारायणमयं वर्म संनह्यद्-भय आगते। पादयोर्जानुनोरूर्वोरुदरे हृद्यथोरसि ॥ ५ ॥ मुखे शिरस्यानुपूर्व्या-दोंकारादीनि विन्यसेत्। ॐ नमो नारायणायेति विपर्ययमथापि वा ॥ ६ ॥ करन्यासं ततः कुर्याद् द्वादशाक्षरविद्यया। प्रणवादियकारान्तमंगुल्यंगुष्ठ-पर्वसु ॥ ७ ॥ न्यसेद्धृदय ओंकारं विकारमनु मूर्धनि। षकारं तु भ्रुवोर्मध्ये

णकारं शिखया दिशेत ॥ ८ ॥ वेकारं नेत्रयोर्युञ्ज्यान्नकारं सर्वसंधिषु । मकारमस्त्रमुद्दिश्य मन्त्रमूर्तिर्भवेद् बुधः ॥ ९ ॥ सविसर्गं फडन्तं तत् सर्वदिक्षु विनिर्दिशेत् । ॐ विष्णवे नमः इति ॥ १० ॥ आत्मानं परमं ध्यायेद ध्येयं षट्शक्तिभिर्युतम् । विद्यातेजस्तपोमूर्तिमिमं मन्त्रमुदाहरेत् ॥ ११ ॥ ॐ हरिर्विदध्यान्मम सर्वरक्षां न्यस्तांघ्रिपद्मः पतगेन्द्रपृष्ठे । दरारिचर्मासिगदेषुचापपाशान् दधानोऽष्टगुणोऽष्टबाहुः ॥ १२ ॥ जलेषु मां रक्षतु मत्स्यमूर्तिर्यादोगणेभ्यो वरुणस्य पाशात् । स्थलेषु मायावटुवामनोऽव्यात् त्रिविक्रमः खेऽवतु विश्वरूपः ॥ १३ ॥ दुर्गेष्वटव्याजिमुखादिषु प्रभुः पायान्नृसिंहऽसुरयूथपारिः । विमुञ्चतो यस्य महाट्टहासं दिशो विनेदुर्न्यपतंश्च गर्भाः ॥ १४ ॥ रक्षत्वसौ माऽध्वनि यज्ञकल्पः स्वदंष्ट्रयोन्नीतधरो वराहः । रामोऽद्रिकूटेष्वथ विप्रवासे सलक्ष्मणोऽव्याद भरताग्रजोऽस्मान् ॥ १५ ॥

मामुग्रधर्मादखिलात् प्रमादान्नारायण: पातु नरश्च हासात् । दत्तस्त्वयोगादथ योगनाथः पायाद् गुणेशः कपिलः कर्मबन्धात ॥ १६ ॥ सनत्कुमारोऽवतु कामदेवाद्धयशीर्षा मां पथि देवहेलनात् । देवर्षिवर्यः पुरुषार्चनान्तरात् कूर्मो हरिर्मां निरयादशेषात् ॥ १७ ॥ धन्वन्तरिर्भगवान् पात्वपथ्याद् द्वन्द्वाद् भयादृषभो निर्जितात्मा । यज्ञश्च लोकादवताज्जनान्ताद् बलो गणात् क्रोधवशादहीन्द्रः ॥ १८ ॥ द्वैपायनो भगवानप्रबोधाद् बुद्धस्तु पाखंडगणात् प्रमादात् । कल्किः कलेः कालमलात् प्रपातु धर्मावनायोरुकृतावतारः ॥ १९ ॥ मां केशवो गदया प्रातरव्याद् गोविन्द आसंगवमात्तवेणुः । नारायणः प्राह्ण उदात्तशक्तिर्मध्यंदिने विष्णुररीन्द्रपाणि ॥ २० ॥ देवोऽपराह्णे मधुहोग्रधन्वा सायं त्रिधामावतु माधवो माम् । दोषे हृषीकेश उतार्धरात्रे निशीथ एकोऽवतु पद्मनाभः ॥ २१ ॥ श्रीवत्सधामापररात्र ईशः प्रत्यूष

ईशोऽसिधरो जनार्दनः । दामोदरोऽव्यादनुसंध्यं प्रभाते विश्वेश्वरो भगवान् कालमूर्तिः ॥ २२ ॥ चक्रं युगान्तानलतिग्मनेमि भ्रमत् समन्ताद् भगवत्प्रयुक्तम् । दंदग्धि दंदग्ध्यरिसैन्यमाशु कक्षं यथा वातसखो हुताशः ॥ २३ ॥ गदेऽशनिस्पर्शनविस्फुलिंगे निष्पिण्ढि निष्पिण्ढ्यजितप्रियासि । कूष्माण्डवैनायकयक्षरक्षोभूतग्रहांश्चूर्णय चूर्णयारीन् ॥ २४ ॥ त्वं यातुधानप्रमथप्रेतमातृपिशाचविप्रग्रहघोरदृष्टीन् दरेन्द्र विद्रावय कृष्णपूरितो भीमस्वनोऽरेर्हृदयानि कम्पयन् ॥ २५ ॥ त्वं तिग्मधारासिवरारिसैन्यमीश प्रयुक्तो मम छिन्धि छिन्धि । चक्षूंषि चर्मञ्छतचन्द्र छादय द्विषामघोनां हर पापचक्षुषाम् ॥ २६ ॥ यन्नो भयं ग्रहेभ्योऽभूत केतुभ्यो नृभ्य एव च । सरीसृपेभ्यो दंष्ट्रिभ्यो भूतेभ्योऽंहोभ्य एव वा ॥ २७ ॥ सर्वाण्येतानि भगवन्नामरूपास्त्रकीर्तनात । प्रयान्तु संक्षयं सद्यो ये नः श्रेयः प्रतीपकाः ॥ २८ ॥ गरुडो

भगवान स्तोत्रस्तोभश्छन्दोमयः प्रभुः । रक्षत्वशेषकृच्छ्रेभ्यो विष्वक्सेनः स्वनामभिः ॥ २९ ॥ सर्वापद्भ्यो हरेर्नामरूपयानायुधानि नः । बुद्धीन्द्रियमनः प्राणान पान्तु पार्षदभूषणाः ॥ ३० ॥ यथा हि भगवानेव वस्तुतःसदसच्च यत । सत्येनानेन न सर्वे यान्तु नाशमुपद्रवाः ॥ ३१ ॥ तथैकात्म्यानुभावानां विकल्प रहितः स्वयम् । भूषणायुधलिंगाख्या धत्ते शक्तीः स्वमायया ॥ ३२ ॥ तेनैव सत्यमानेन सर्वज्ञो भगवन हरिः । पातुसर्वैःस्वरूपैर्नः सदा सर्वत्र सर्वगः ॥ ३३ ॥ विदिक्षु दिक्षूर्ध्वमयः समन्तादन्तर्बहिर्भगवान् नारसिंहः । प्रह्लापयंल्लोकभयं स्वनेन स्वतेजसा ग्रस्तसमस्ततेजाः ॥ ३४ ॥ मघवन्निदमाख्यातं वर्म नारायणात्मकम् । विजेष्यस्यञ्जसा येन दंशितोऽसुरयूथपान् ॥ ३५ ॥ एतद् धारयमाणस्तु यं यं पश्यति चक्षुषा । पदा वा संस्पृशेत सद्यः साध्वसात स विमुच्यते ॥ ३६ ॥ न कुतश्चिद् भयं तस्य

विद्यां धारयतो भवेत्। राजदस्युग्रहादिभ्यो व्याघ्रादिभ्यश्चकर्हिचित ॥ ३७ ॥
इमां विद्यां पुरा कश्चित कौशिको धारयन द्विजः। योगधारणया स्वांगं
जहौ स मरुधन्वनि ॥ ३८ ॥ तस्योपरि विमानेन गन्धर्वपतिरेकदा। ययौ
चित्ररथः स्त्रीभिर्वृतो यत्र द्विजक्षयः ॥ ३९ ॥ गगनान्न्यपतत्। सद्यः सवि-
मानो ह्यवाक्शिराः। स वालखिल्यवचनादस्थीन्यादाय विस्मितः। प्रास्य
प्राचीसरस्वत्यां स्नात्वा धाम स्वमन्वगात ॥ ४० ॥ श्रीशुक उवाच ॥ य
इदं शृणुयात काले यो धारयति चादृतः। तं नमस्यन्ति भूतानि मुच्यते
सर्वतो भयात ॥ ४१ ॥ एतां विद्यामधिगतो विश्वरूपाच्छतक्रतुः। त्रैलोक्य-
लक्ष्मीं बुभुजे विनिर्जित्य मृधेऽसुरान ॥ ४२ ॥

॥ इति नारायण कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथ न्यासोपचार सहितं

❀ माध्यन्दिनीयपुरुषसूक्तम् ❀

अथ ध्यानम्–शंखचक्रगदापद्मपाणिं सजलजलदसुन्दरं संवीतपीताम्बरं कमलदललितलोचनं, लसत्किरीटकुण्डलकेपूरकंकणं, रत्नखचितक्षुद्रमुद्रान्वितकरांगुलीकंकटितटविलसद्रत्नमेखलं श्रीभगवन्तं ध्यायामि ॥ इति ध्यानम् ॥

हरि–ॐ–सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । सभूमिर्ठं० सर्व्वतः स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाँगुलम् ॥ १ ॥ इति वामकरे, आवाहनं सम० । पुरुषऽएवेदर्ठं० सर्व्वंयद्भूतंयच्चभाव्व्यम । उतामृतत्वस्येशानोयदन्नेनातिरोहति ॥ इति दक्षिण करे, आसनं स० । एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरुषः पादोस्यव्विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३ ॥ इतिवामपादे, पाद्यं ।

त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः। ततोविष्वंव्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ ४ ॥ दक्षिणपादे, अर्घ्यं सम०। ततोविराडजायतविराजोऽअधि पुरुषः—। सजातोऽअत्यरिच्यत पश्चादभूमिमथोपुर—॥ ५ ॥ वामजानौ, आचमनीयं। तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतःसम्भृतंपृषदाज्ज्यम्। पशूँस्ताँश्चक्रेव्वायव्यानारण्याग्राम्याश्चये ॥ ६ ॥ दक्षिणजानौ, स्नानम आचमनीयं स०। तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचःसामानि जज्ञिरे। छन्दाᳬसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ७ ॥ वामकट्यां, वस्त्रयुग्ममाचनीयं स०। तस्मादश्श्वाऽअजायन्तयेकेचोभयादतः। गावो ह जज्ञिरेतस्मात्तस्ममाज्जाताऽअजावयः ॥ ८ ॥ दक्षिणकट्याँ, यज्ञोपवीतमाचमनम। तंयज्ञं वर्हिषिप्प्रौक्षन्न्पुरुषञ्जातमग्ग्रतः। तेनदेवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्चये ॥ ९ ॥ नाभौ चन्दनं सम:०। यत्पुरुषंव्यदधुःकतिधाव्यकल्पयन्। मुखं किमस्स्यासीत्किंबाहूकिमूरूपादाऽउच्च्येते ॥ १० ॥ हृदये, पुष्पाणि स०।

ब्राह्मणोऽस्स्यमुखमासीद्बाहूराजन्न्यः कृतः । ऊरूतदस्ययद्वैश्यः पद्भ्या-र्ठ॰ शूद्रोऽजायत ॥ ११ ॥ कण्ठे धूपं स॰ । चन्द्रमामनसो जातश्च्चक्षोः सूर्य्योअजायत । श्श्रोत्रादद्वायुश्च्चप्राणश्चमुखादग्निरजायत ॥ १२ ॥ वाम-वाहौ, दीपं सम॰ । नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्षर्ठ॰ शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत । पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्त्रात्तथालोकांऽअकल्पयन् ॥ १३ ॥ दक्षिणवाहौ, नैवेद्यं । यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्न्वत । वसन्तोऽस्यासीदाज्ज्यङ-ग्रीष्ममऽइध्मः शरद्धविः ॥ १४ ॥ मुखे, नमस्कारं सम॰ । सप्तास्यास-न्नपरिधयस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः । देवा यद्यज्ञन्तन्न्वानाऽअवघ्नन्नपुरुषं-पशुम् ॥ १५ ॥ अक्ष्णोः दक्षिणां प्रदक्षिणां च सम॰ । यज्ञेनयज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्न्यासन् । तेहनाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥ १६ ॥ शिरसि, मंत्र पु॰ प्रदक्षिणां च ततः पूजान्ते क्षमा प्रार्थनां कुर्यात, यस्य स्मृत्येत्यादिपद्यैः ।

❀ अथ श्रीसूक्तम् ❀

ओ३म ऐं हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह । १ । ओ३म ऐं ओ३म ह्रीं तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्याँ हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् । २ । ओ३म ह्रीं ओ३म श्रीं अश्व पूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् । प्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवीजुषताम् । ३ । ओ३म श्रीं ओ३म क्लीं कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामाद्रां ज्वलन्तीं तृन्ताँ तर्पयन्तीं पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् । ४ । ओ३म क्लीं ओ३म वदवद चन्द्राँ प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् । तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्म्मेनश्यताँ तां वृणे । ५ । ओ३म वदवद ओ३म वाग्वादिनी आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ विल्व । तस्य फलानि तपसा नुदन्तु भायान्तरायाश्च वाह्याअलक्ष्मीः । ६ । ओ३म वाग्वादिनी ओ३म ऐं उपैतु माँ देवसखः कीर्तिश्च भणिना सह । प्रादुर्भूतोऽस्मिराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्त्तिमृद्धिं ददातु मे । ७ । ओ३म ऐं ओ३म सौः क्षुत्पिपा-सामलाँ ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् । अभूतिसममृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् । ८ । ओ३म सौः ओ३म हंसः गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् । ९ । ओ३म हंसः ओ३म आं मनसः काममाकूतिं वाच सत्यमशीमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः । १० । ओ३म आँ ओ३म ह्रां कर्दमेन प्रजा भूता मयि संभव कर्दमः । श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्म मालिनीम् । ११ । ओ३म ह्रीं ओ३म

क्रीं आपः सृजन्तु स्निग्धानिचिक्लीत वस मे गृहे । वाचं देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले । १२ । ओ३म क्रीं ओ३म क्लीं, आर्द्रांपुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलाँ पद्ममालिनीम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह । १३ । ओ३म क्लीं, ओ३म श्रीं, आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् । सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह । १४ । ओ३म श्रीं ओ३म ह्लूँ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वा-न्विन्देयं पुरुषानहम् । १५ । ओ३म ह्लूँ ओ३म स्वाहा ओ३म ह्लाँ ऐं यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् । श्रियः पंचदशर्चञ्च श्रीकामः सततं जपेत् । १६ ।

अथ लक्ष्मीस्तोत्र प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः ।। जय पद्मपलाषाक्षि जयत्वं श्रीपतिप्रिये ।। जय मातर्महालक्ष्मि संसारार्णवतारिणी । १ । महालक्ष्मि नमस्तुभ्यम् नमस्तुभ्यम सुरेश्वरि । हरिप्रिये नमस्तुभ्यम् नमस्तुभ्यम् दयानिधे । २ । पद्मालये नमस्तुभ्यम् नमस्तुभ्यम् च सर्वदे । सर्वं भूतहितार्थाय वसुवृष्टिं सदाकुरु । ३ । जगन्मातर्नमस्तुभ्यम् नमस्तुभ्यम् दयानिधे । दयावति नमस्तुभ्यम् विश्वेश्वरि नमोऽस्तुते । ४ । नमः क्षीरार्णवसुते नमस्त्रैलोक्यधारिणी व वृष्टे नमस्तुभ्यम् रक्षमां शरणागतम् । ५ । रक्ष त्वं देवदेवेशि देवदेवस्य वल्लभे । दारिद्र्यात्त्राहि मां लक्ष्मि कृपाम् कुरु ममोपरि । ६ । नमस्त्रैलोक्यजननि नमस्त्रैलोक्यपावनि । ब्रह्मादयो नमन्ति त्वाँ जगदानन्ददायिनी । ७ । विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यम् नमस्तुभ्यम् जगद्धिते । आर्तिहन्त्रि नमस्तुभ्यम् समृद्धिं कुरु मे

सदा । ८ । अब्जवासे नमस्तुभ्यम् चपलायैनमोनमः । चञ्चलायै नमस्तुभ्यम् ललितायै नमोनमः । ९ । नमः प्रद्युम्नजननि मातस्तुभ्यम् नमोनमः । परिपालय माँ मातर्देवि त्वं शरणागतम् । १० । शरण्ये त्वाँ प्रपन्नोऽस्मि कमले कमलालये । त्राहि त्राहि महालक्ष्मि परित्राणपरायणे । ११ । पाण्डित्यं शोभते नैव न शोभन्ते गुणा नरे । शीलत्वं नैव शोभेत महालक्ष्मि त्वया बिना । १२ । तावद्विराजते रूपम् तावच्छीलं विराजते । तावद्गुणा नारायणां च यावल्लक्ष्मीः प्रसीदति । १३ । लक्ष्मि त्वयाऽलंकृतमानवा ये पापै विमुक्तानृपलोकमान्याः । गुणैर्विहीना गुणिनो भवंति दुःशीलिनः शीलवताँ वरिष्ठाः । १४ । लक्ष्मीर्भूषयते रूपम् लक्ष्मी र्भूषयते कुलम् । लक्ष्मीर्भूषयतेविद्याँ सर्वाल्लक्ष्मीर्विशिष्यते । १५ । लक्ष्मीत्वद्गुण कीर्तनेन सकला भूर्यात्यलं जिह्मतां रुद्राद्यार विचन्द्रदेवपतयोववतुं न नैव क्षमाः । अस्माभिस्तव रूप लक्षणगुणान्वक्तुं कथम् शक्यतेमातर्मां परिपाहिविश्वनके कृत्वा ममेष्टम् ध्रुवम् । १६ । दीनाति भीतं भवतापपीपितं धनैर्विहीनं तव पार्श्वमागतम् कृपा निधित्वान्मम लक्ष्मि सत्वरं धनप्रदानाद्धननायकं कुरु । १७ । मां विलोक्य जननी हरिप्रिये निर्धनं तव समीपमागतम् । देहिमे झटिति लक्ष्मि कराग्रम् वस्त्रकाञ्चनवरान्नमद्-भुतम् । १८ । त्वमेव जननी लक्ष्मि पिता लक्ष्मि त्वमेव च । भ्रातात्वं च सखा लक्ष्मि विद्या लक्ष्मि त्वमेव च । १९ । त्राहि त्राहि महालक्ष्मि त्राहि त्राहिसुरेश्वरि । त्राहि त्राहि जगन्मातर्दा-रिद्र्यात्राहि वेगतः । २० । नमस्तुभ्यम् जगद्धात्रि नमस्तुभ्यम् नमोनमः । धर्माधारे नमस्तुभ्यम् नमः संपत्तिदायिनी । २१ । दारिद्र्यार्णवमग्नोऽहं विमग्नोऽहं रसातले । मज्जन्तं माँ करे धृत्वा तूद्धर त्वं रमेद्रुतम् । २२ । किं लक्ष्मिबहुनोक्तेन जल्पितेन पुनः पुनः । अन्यन्मे शरणम् नास्ति सत्यं सत्य

हरिप्रिये । २३ । एतच्छ्रुत्वाऽगस्ति वाक्यम् हृष्यमाणा हरिप्रिया उवाच मधुराँ वाणीं तुष्टाऽहं तव सर्वदा। २४ । लक्ष्मीउवाच । यत्वयोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठिस्यति मानवः। शृणोति च महा भागस्तस्याहं वशवर्तिनी । २५ । नित्यं पठति यो भक्त्या त्व लक्ष्मी स्तस्य नश्यति। ऋणं च नश्यते तीव्रं वियोगं नैव पश्यति । २६ । यः पठत्प्रातरुत्थाय श्रद्धाभक्तिसमन्वितः। गृहेतस्य सदा तुष्टा नित्यं श्रीः पतिना सह। २७ । सुखसौभाग्यसंपन्नो मनस्वी बुद्धिमान् भवेत् । पुत्रवान् गुणवान् श्रेष्ठो भोग भोक्ता च मानवः। २८ । इदं स्तोत्र महापुण्यं लक्ष्म्याऽगश्तिप्रकीर्तितम् । विष्णुप्रसादजननं चतुर्वर्गफलप्रदं । २९ । राजद्वारे जयश्चैव शत्रोश्चैव पराजयः । भूतप्रेतपिशाचानां व्याघ्राणाँ न भयं तथा। ३० । म शस्त्रानलतो यौद्धाद्भयं तस्य प्रजायते। दुर्वृत्तानां च पापानाँ बहुहानिकरं परं । ३१ । मंदुराकरिशालासु गवां गोष्ठं समाहितः। पठेत्तद्दोषशान्त्यर्थं महापातकनाशनं। ३२ । सर्वसौख्यकरं नृणां मायुरारोग्यदं तथा। अगस्तिमुनिना प्रोक्तं प्रजानां हितकाम्यया। ३३ ।

॥ इति लक्ष्मी स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

श्री लक्ष्मीजी की आरती

जय लक्ष्मी माता जय लक्ष्मी माता,
आदिशक्ति कहि तुमको सुरगण है ध्याता।
जय कमलाल वालिनी हरि प्रिये कमले,
काली गिरा समेत जय लक्ष्मी विमले।

इन्द्राणी रुद्राणी ब्रह्माणी तुम ही,
सकल लोक की माता पालन हेतु मही।

जिस घर वास तुम्हारा उसका क्या कहना,
रम्य भवन हैं उनके होवे अति गहना।

महानिशा में घर-घर पूजा हो तेरी,
जय कमले हरि भामिनी अब सुध ले मेरी।

निज पति पुत्र समेता बसियो मम घर में,
यही प्रार्थना मेरी स्वीकारो उर में।

पूतकपूत भलेहि हो लेकिन नहि माता,
यही सोच अब मुझपर करुणाकर माता।

नहीं पाठ पूजा मैं जानूँ महतारी,
केवल चरणों का ही हूं आश्रयकारी।

भक्ति भाव का अम्बे ज्ञान नहीं मुझको,
'धरणीधर' की अम्बे लज्जा है तुझको।

—:०:—

श्री तुलसीजी की आरती

जय तुलसी माता, जय तुलसी माता।
सब जग सुख की दाता वरदाता ॥ जय० ॥

सब योगों के ऊपर, सब रोगों के ऊपर।
रुजसे रक्षा करके, भव त्राता ॥ जय० ॥

बहुपत्री हे श्यामा, सुर बल्ली हे ग्राम्या।
विष्णुप्रिय जो तुमको सेवे सो नर तर जाता ॥ जय० ॥

हरि के शीश विराजत त्रिभुवन से हो वन्दित।
पतित जनों की तारिणी तुम हो विख्याता ॥ जय० ।

लेकर जन्म विजन में आई दीव्य भवन में।
मानव लोक तुम्हीं से, सुख सम्पति पाता ॥ जय० ॥

हरि को तुम अति प्यारी. श्याम बरण सुकुमारी।
प्रेम अजब है उनका तुमसे कैसा नाता ॥ जय० ॥

—: ० :—

श्री सत्यनारायण जी की आरती

जय श्री लक्ष्मी रमणा जय श्री लक्ष्मी रमणा। सत्यनारायण स्वामी जन पातक हरणा। जय टेक।
रत्न जटित सिंहासन अद्भुत छवि राजे। नारद करत निरन्तर घंटा ध्वनि बाजे। जय. १
प्रकट भये कलिकारण द्विज को दर्श दियो। बूढ़ा ब्राह्मण बनके कंचन महल कियो। जय. २
दुर्बल भील कराल जिन पर कृपा करी। चन्द्रचूड़ एक राजा तिनकी विपत्ति हरी। जय. ३
वैश्य मनोरथ पायो श्रद्धा तज दीनी। सो फल भोग्यो प्रभु जी फेर स्तुति कीन्ही। जय. ४
भाव भक्ति के कारण छिन-२ रूप धरयो। श्रद्धा धारण कीनी जन को काज सरयो। जय. ५
ग्वाल बाल संग राजा बन में भक्ति करी। मनवांछित फल दीना दीन दयाल हरी। जय. ६
चढ़त प्रसाद सवाया कदली फल मेवा। धूप दीप तुलसी से राजी सत्यदेवा। जय. ७
श्रीसत्यनारायण की आरती जो कोई नर गावे। भगतदास मनसुख संपत्ति मनवांछित पावे।
जय. ८